अथर्ववेद का काव्य

R/1212

राधावल्लभ त्रिपाठी

प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी संस्कृत में जनजीवन से जुड़ी हुई काव्यधारा तथा कालिदास आदि महाकवियों और नाट्यकारों की रचनाओं के हिन्दी अनुवादों के लिये जाने जाते हैं। अथर्ववेद के पैंतीस सूक्तों के उनके अनुवाद की प्रस्तुत संचयिका वेद के अध्ययन की दिशा में एक सार्थक और नया प्रयास है। अथर्ववेद में न केवल भारतीय साहित्य की प्राचीनतम निधि सुरक्षित है, भारतीय परम्परा और संस्कृति के विकास की दुर्लभ कड़ियाँ भी इसमें अनुस्यूत हैं। अन्नसिद्धि, मेधाजनन, ब्रह्मचर्य, राष्ट्रसंवर्धन, परिवार का अभ्युदय, समाजकल्याण, राजकर्म, रोगोपचार, संस्कार, अभिचार, तत्त्वमीमांसा विषयक चिंतन आदि विषयों की जैसी विविधता इस वेद में है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। विराट् तत्त्व की अनुभूति, कालचक्र के आवर्तन, विवर्तन, मातृभूमि के प्रति अकुंठ भक्ति तथा जीवनमूल्यों की गहन अभिव्यक्ति कालसूक्त तथा पृथिवीसूक्त में की गयी है, जबकि सूर्या के विवाह का सूक्त भारतीय पारिवारिक जीवन के उन मूलाधारों का निदर्शन है, जो आज भी किसी न किसी रूप में हमारी सामाजिक संरचना में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। अथर्ववेद की रसवत्ता और विलक्षण काव्याभिव्यक्ति को गहन अध्ययन और सरल भाषा में उतारने का प्रामाणिक प्रयास अनुवादक ने यहाँ किया है। विद्वान् अनुवादक के द्वारा आरम्भ में दी गई भूमिका में अथर्ववेद की प्राचीनता, वैदिक संहिताओं में इसकी स्थिति, अथर्ववेद के द्रष्टा ऋषि, उसका विषयवैशिष्ट्य आदि विषयों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। अनुवादों के अन्त में दी गई विशद टिप्पणियों से यह संकलन वेद के जिज्ञासु पाठकों के साथ ही गम्भीर अध्येताओं के लिये भी उपादेय बन गया है।

अथर्ववेद का काव्य

अथर्ववेद के चुने हुए सूक्तों का अनुवाद

अनुवादक
राधावल्लभ त्रिपाठी

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

ATHARVAVEDA KA KAVYA

Translated by
Radhavallabh Tripathi

ISBN : 81-7124-536-6

प्रथम संस्करण : 2007 ई०

प्रकाशक

विश्वविद्यालय प्रकाशन

चौक, वाराणसी-221 001

फोन व फैक्स : (0542) 2413741, 2413082

E-mail : vvp@vsnl.com • sales@vvpbooks.com

Website : www.vvpbooks.com

मुद्रक

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

चौक, वाराणसी-221 001

भूमिका

अथर्ववेद शब्द का समास अथर्वत् और वेद इन दो शब्दों से बना है। अथर् का अर्थ है अग्नि। जो अग्नि को धारण करता है या उसे प्रज्जवलित करता है, वह अथर्वत् (अथर्वा) है। स्पष्ट ही प्रागैतिहासिक काल में अथर्ववेद का सम्बन्ध उन पुरोहितों, ओझाओं और मन्त्रवेत्ताओं से विशेष था, जो अग्नि प्रज्ज्वलित करना जानते थे। अथर् या अग्नि का चयन करने के कारण एक वैदिक ऋषि या उनके वंश के लोग अथर्वन् (अथर्वा) कहलाये। अथर्वा ऋषि का वेद अथर्ववेद है। त्रिवेदी ने अपने अथर्ववेदभाष्य की भूमिका में गमनार्थक थर्व धातु से थर्व शब्द को निष्पन्न मानते हुए थर्व का अर्थ अस्थिर व अथर्व का अर्थ स्थिर, निश्चल परम तत्त्व माना है। किन्तु अथर्ववेद की परम्परा में यह निर्वचन ग्राह्य नहीं कहा जा सकता है।

त्रयी और अथर्ववेद

अथर्ववेद चौथा वेद है। आरंभ में तीन ही वेदसंहिताएँ (ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद) मान्य रही हैं। इनके लिये 'त्रयी' शब्द का प्रयोग होता रहा है। ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक, छान्दोग्य, गौतम धर्मसूत्र, बोधायन धर्मसूत्र, मनुस्मृति आदि में वेदों की त्रयी का बार बार उल्लेख है, जिससे प्रतीत होता है कि अथर्ववेद का पठन पाठन व यज्ञादि में उपयोग आरंभ में कम था। पर इसका आशय यह नहीं कि अथर्वसंहिता ऋग्वेद आदि तीन संहिताओं के बाद की है। तीन वेदों की परम्पराएँ अभिजात परम्पराएँ थीं, अथर्ववेद उनके समवर्ती, उन्हीं के समान प्राचीन जनजातियों की परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करने वाली संहिता रही है। वास्तव में अथर्ववेद अन्य वैदिक संहिताओं के ही समान प्राचीन है। ऐतरेय ब्राह्मण और गोपथ ब्राह्मणों में इसका उल्लेख है। ज्ञान तथा चिंतन की दृष्टि से अथवेवेद भारतीय वाङ्मय की सर्वथा प्रामाणिक कृतियों में एक है। इसीलिये प्राचीन काल से ही इसकी एक संज्ञा ब्रह्मवेद भी रही है। गोपथ में कहा गया है—"चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो ब्रह्मवेदः।"

प्राचीनता

सामान्यतः अथर्ववेद को तीनों वैदिक संहिताओं में परवर्ती मान लिया जाता है, पर यह सम्भव है कि इसके अनेक सूक्त ऋग्वेद के समान या उससे भी

प्राचीन हों। ब्लूमफील्ड (अनु० : डॉ० सूर्यकान्त : १९६४ : ०३) ने अथर्ववेद को यजुर्वेद से प्राचीन माना है। दूसरी ओर उन्होंने अथर्ववेद के अपने अध्ययन में बार बार अथर्ववेद के छन्दों की विशृंखलता, व्याकरणविषयक अव्यवस्था तथा भाषा की अनगढता की चर्चा की है। ये स्थितियाँ भी अथर्ववेद के बहुसंख्य सूक्तों के अतिप्राचीन होने की द्योतक कही जा सकती हैं।

माहात्म्य

याज्ञिक परम्परा अथर्ववेद को त्रयी (ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद) के बराबर महत्त्व देती रही है। सायण ने अथर्ववेद का भाष्य याज्ञिक विधान व अनुष्ठानिक विनियोग की दृष्टि से किया है। इस दृष्टि से उन्होंने कहा है कि अकेला अथर्ववेद शेष तीनों वेदों के समतुल्य है—"वाङ्मनस निर्वर्त्यस्य यज्ञशरीरस्य अर्धमेव त्रिभिर्वेदैर्निष्पाद्यते, अर्धान्तरं तु अथर्ववेदेनेति श्रूयते" (श्रुति है कि वाणी और मन से सम्पाद्य यज्ञशरीर का आधा ही अंग तीनों वेदों से सम्पन्न होता है, शेष आधा अथर्ववेद से ही निष्पादित होता है।)

नाट्यशास्त्र में भरतमुनि ने नाट्य की उत्पति बताते हुए कहा है कि ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गीति, यजुर्वेद से अभिनय तथा अथर्ववेद से रसों को ले कर नाट्य की रचना की। अथर्ववेद में अनेक रस समाहित हैं। रस जीवन है, रस परम तत्त्व है। इसलिये अथर्ववेद में जीवन की छवि भी है और परम तत्त्व का दर्शन भी।

अथर्ववेद के विभिन्न नाम

अथर्ववेद का मूल नाम 'अथर्वाङ्गिरस' था। अथर्ववेद के ही मन्त्र (१०/७/२०) में कहा गया है—

यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकृषन्।
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः॥

यहाँ ज्येष्ठ ब्रह्म या परब्रह्म का निरूपण करते हुए चारों वेदों के नाम लिये गये हैं, और अथर्वाङ्गिरस (अथर्ववेद) को इस ब्रह्म का मुख कहा गया है। अथर्ववेद की पुरानी पोथियों में भी इस वेद के लिये यह संज्ञा प्रयुक्त है। मनु (११/३३) ने इसे 'अथर्वाङ्गिरसी श्रुतिः' कहा है।

यजुर्वेद की वाजसनेयि संहिता (११/३२) में अथर्वा को अग्नि का प्रथम मन्थनकर्ता बताया है। अथर्वा ऋषि के साथ भृगु का भी इस वेद का द्रष्टा कहा गया है। अथर्वा तथा भृगु दोनों की अंगिरस् गोत्र के ऋषि थे। अत एव इस वेद को कहीं कहीं आथर्वाङ्गिरस वेद कहा गया है, तो कहीं भृग्वङ्गिरसवेद।

गोपथब्रह्मण और शतपथ ब्राह्मण इसे केवल अंगिरस वेद भी कहते हैं। तथा छान्दोग्य और बृहदारण्क उपनिषद् इसका उल्लेख अथर्वांगिरस वेद के नाम से करते हैं।

ब्रह्मज्ञान की चर्चा होने से इसे ब्रह्मवेद, क्षत्रियो के कर्तव्यों का उपदेश होने से क्षत्रवेद, आयुर्वेद और चिकित्सा का ज्ञान प्रदान करने के कारण भैषज्यवेद, पृथ्वीसूक्त जैसा महनीय सूक्त इसमें है,—इस आधार पर महीवेद; छन्दोवेद तथा त्रयी से व्यतिरिक्त होने के कारण चतुर्थवेद आदि भी इसके नाम प्रचलित हैं। श्रौतयाग के चार पुरोहित हैं—होता (ऋग्वेद), उद्गाता (सामवेद), अध्वर्यु (यजुर्वेद) तथा ब्रह्मा (अथर्ववेद)। इनमें एक दृष्टि से ब्रह्मा सर्वोपरि है, क्योंकि वह तीनों पुरोहितों के कार्य की निगरानी रखता है, उनके द्वारा त्रुटि होने पर उसके मार्जन या प्रायश्चित्त का विधान करता है। वैतान सूत्र के अनुसार यह ब्रह्मा ब्रह्म का ही प्रतिनिधि होता है, गोपथ ब्राह्मण में इस ब्रह्मा को विद्वान् और सर्ववित् कहा गया है। इस चौथे-ब्रह्मा-के कर्म का प्रतिपादक होने से भी अथर्ववेद को ब्रह्मवेद कहा जाता है। अथवा जैसा ऊपर कहा गया है ब्रह्मज्ञान के प्रतिपादक होने से इसे ब्रह्मवेद कहा जाता रहा है। ब्रह्माओं में से अथर्वा नामक ऋषि के द्वारा साक्षात्कृत होने से भी इसकी संज्ञा अथर्ववेद हुई।

अथर्ववेद के द्रष्टा ऋषि

मुण्डकोपनिषत् में ब्रह्मविद्या की परम्परा के निरूपण में अथर्वा कृषि का उल्लेख आया है। शतपथ ब्राह्मण, बृहदारणयक उपनिषद् आदि में इस वेद को क्षत्रवेद कहा गया है। आधुनिक अध्येताओं में वेबर ने अर्थवेद का सम्बन्ध क्षत्रियों के साथ सिद्ध करने का प्रयास किया है। पूरी परम्परा में अथर्ववेद का सम्बन्ध क्षात्र तेज से किसी न किसी रूप में विशेष माना गया, तभी तो भारवि ने अपने किरातार्जुनीय महाकाव्य (१०/१०) में नायक अर्जुन के लिये उपमा दी—

यमनियमकृशीकृतस्थिराङ्गः परिददृशे विधृतायुधः स ताभिः।
अनुपमशमदीप्तितागरीयान् कृतपदङ्क्तिरथर्वणेन वेदः।

(यम और नियम के कारण कृश कर दिये गये पर स्थिर अंगों वाले और आयुध लिये हुए अर्जुन को उन अप्सराओं ने देखा, तो अनुपम शान्ति और दीप्तता दोनों के साथ गरिमामय वह उन्हें वह ऐसा लगा जैसे अथर्वा के द्वारा विरचित पंक्तियों वाला वेद हो।)

यहाँ अथर्वा के द्वारा विरचित पंक्तियों वाले वेद या अथर्ववेद से अर्जुन को उपमा दी गई है क्योंकि अथर्ववेद भी शान्ति और उग्रता दोनों से सम्बद्ध कर्मों का प्रतिपादन करता है और अर्जुन में भी शम के साथ उग्रता समन्वित है। मल्लिनाथ

ने इस श्लोक की अपनी व्याख्या में वसिष्ठ ऋषि को ही अथर्वा माना है, क्योंकि वसिष्ठ ने अथर्ववेद के मन्त्रों का उद्धार किया।

अथर्ववेद के साथ दो ऋषियों के नाम अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं। इनमें एक हैं—भिषक् अथर्वण, और दूसरे हैं घोर अंगिरस। दोनों का उल्लेख समादरपूर्वक वैदिक साहित्य में होता रहा है। कठोपनिषद् (१६/३) में भिषक् अथर्वण तथा कौशितकि ब्राह्मण (३०/६) में घोर अंगिरस उल्लिखित हैं। अथर्वा और अंगिरस ये दोनों औषधियों की परख करने वाले ऋषि थे। ब्राह्मण ग्रन्थों में अथर्वा ऋषि को औषधियों का पारखी और अथर्ववेद को औषधशास्त्र का भंडार कहा गया है। पञ्चविंश ब्राह्मण में कहा गया है—"भेषजं वा आथर्वणनि" (१९/९/१०) तथा "भेषजं वै देवानामथर्वणोभेषज्यायै" (१६/१०/१०)। जितने उल्लेख इन दोनों ऋषियों के मिलते हैं, उनमें भिषक् या वैद्य का विशेषण सर्वत्र केवल अथर्वा ऋषि के ही लिये है, और घोर विशेषण केवल अंगिरस के लिये। गोपथ और कोशीतकि ब्राह्मणों में भी इन दोनों ऋषियों का उल्लेख है। गोपथ (१/३/४) में कहा गया है कि ब्रह्मज्ञान की भूयिष्ठता के कारण भृगु नाम पड़ा और रस के ज्ञान के लिये अंगिरस नाम हुआ। ब्लूमफील्ड (१९९२ : भूमिका, २३) इसे मूर्खतापूर्ण निरुक्ति बताते हैं। दूसरी ओर अथर्वा ऋषि का सम्बन्ध शान्तिकर्म और अंगिरम का सम्बन्ध अभिचार कर्म से माना जाता रहा है। राक्षसों और दस्युओं के वधकर्ता के रूप में भी अनेकत्र इन दोनों ऋषियों का स्मरण किया गया है, और तैत्तिरीय ब्राह्मण तथा मैत्रायणी संहिता आदि में देवताओं के रूप में ये दोनों प्रतिष्ठित हैं।

अस्तु, अथर्वा और अंगिरस ऋषियों में पहले शान्त प्रकृति के हैं, दूसरे घोर प्रकृति के। इन दोनों ऋषियों की इस प्रकृति के आधार पर आरम्भ से ही अथर्ववेद के भी दो रूप परम्परा में स्वीकार किये जाते रहे हैं—शान्त और घोर। अभिचार कर्म या टोने टोटके भी इसी तरह दो प्रकार के हो जाते हैं—एक मांगलिक और सर्वोपकारक है, दूसरा संहारक। यही नहीं जिन बहुसंख्य औषधियों, जड़ी-बूटियों का उल्लेख अथर्ववेद के अनेक सूक्तों में आया है वे भी शान्त और घोर इन दो रूपों में वर्गीकृत हैं। शान्त औषधियाँ, जो ज्वर आदि विकारों का शमन करती हैं, आथर्वण कहीं गईं, अभिचार कर्म में प्रयुक्त होने वाली औषधियाँ आंगिरस कही गईं हैं।

अथर्ववेद तथा अभिचार-परम्परा

ऊपर महाकवि भारवि के किरातार्जुनीयम् का पद्य उद्धृत किया गया है। इस पद्य में भारवि ने अथर्ववेद के शान्त और घोर दोनों रूपों का संकेत किया है। मल्लिनाथ ने इस स्थल पर अपनी टीका में कहा है—

शमः शान्तिरभ्युदयकाले दीप्तता उग्रताऽभिचारकाण्डे ताभ्यामनुपमाभ्यां गरीयानुदग्रः। अथर्वणा वसिष्ठेन कृता रचना पदानां पङ्क्तिरानुपूर्वी यस्य स वेदः। चतुर्थवेद इत्यर्थः। अथर्वणस्तु मन्त्रोद्धारो वसिष्ठकृत इत्यागमः।

इस प्रकार मल्लिनाथ को इस परम्परा का बोध था कि अथर्ववेद में शान्तिकर्म भी हैं, और अभिचार कर्म के कारण यह वेद उग्रता या क्षात्र तेज से समन्वित भी है। इसके साथ ही मल्लिनाथ ने अथर्ववेद को ले कर एक महत्त्वपूर्ण सूत्र भी विचार के लिये यहाँ अपनी टीका में पिरो दिया है। उनके अनुसार अथर्वण के मन्त्रों का उद्धार वसिष्ठ ने किया था—यह आगम परम्परा से ज्ञात होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मल्लिनाथ निगम या श्रुति के समानान्तर आगम की परम्परा से अथर्ववेद का सम्बन्ध यहाँ सूचित कर रहे हैं।

उच्चाटन, मारण या अभिचारकर्म (टोने टोटके) आदि की तान्त्रिक परम्परा से अथर्ववेद का सम्बन्ध परवर्तीकाल में भी स्वीकार किया जाता रहा। महाकवि मंख ने अपने श्रीकण्ठचरित में त्रिपुरासुर के संहार के लिये प्रयाण करते शंकर के रथ का वर्णन किया है। उस रथ में सगर्व अथर्व रथांगरक्षक बन कर दैत्यों के उच्चाटन के लिये हवन करता हुआ चलता है—

गर्वादथर्वाऽथ रथाङ्गरक्षस्तस्यैकपार्श्वे प्रणयं बबन्ध।
पुराभिचाराय महोमयेऽग्नौ कुर्वन्निवापाङ्गरुचास्रहोमम्॥

(*श्रीकण्ठचरित*, २०/३३)

अथर्वा, अंगिरस् तथा भृगु इन तीनों का सम्बन्ध अग्नि चयन से विशेष रूप से माना जाता रहा है। ऋग्वेद (८/४३/१६) में इन तीनों का उल्लेख एक साथ हुआ है, अन्यत्र भृगु अंगिरस या भृगु अथर्वा संज्ञाएँ प्रयुक्त हैं। अथर्वा ऋषि की चर्चा ऋग्वेद और यजुर्वेद में भी आती है। ऋग्वेद (१०/२१/५) में कहा गया है—अग्निर्जातो अथर्वणा-अथर्वा ने ही अग्नि को जन्म दिया। यजुर्वेद की वाजसनेयि संहिता (१९/३३) में अथर्वा को अग्नि का प्रथममन्थनकर्ता कहा गया है।

शाखाएँ तथा ब्राह्मण

वैदिक संहिताओं के अविभाज्य अंश है—ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषत्। अथर्ववेद का एक ही ब्राह्मण ग्रन्थ मिलता है—गोपथब्राह्मण। प्रणव उपनिषत् इसी ब्राह्मण का अंग है (गोपथ, १/१/१६-३) और एक दूसरा अंश भी (१/१/३१-३८) उपनिषत् ही कहा गया है। यह रोचक तथ्य है कि संन्यासियों के लिये रचित उपनिषत्-मुण्डकोपनिषत्-अथर्ववेद से सम्बद्ध माना गया है।

पतंजलि तथा सायण ने अथर्ववेद की नौ शाखाओं का उल्लेख किया है। इनके नाम इसप्रकार हैं—पैप्पलाद, तौद, मौद, शौनकीय, जाजल, जलद,

ब्रह्मवदा, देवदर्शा तथा चारणवेद्या। वर्तमान में इनमें शौनकीय शाखा सर्वाधिक प्रचलित है। पैप्पलाद शाखा भी प्राप्त होती है।

विभाजन

अथर्ववेद (शौनकीय शाखा) में २० कांड, ७३१ सूक्त और ५९८७ मंत्र हैं। ब्लूमफील्ड (अनु०-डा० सूर्यकान्त, १९६४:१) ने इसमें ७३० सूक्त व लगभग ६००० मन्त्र होने का उल्लेख किया है, पर किस शाखा के आधार पर वे यह कलेवर बता रहे हैं, स्पष्ट नहीं होता। सूक्तों में मंत्रो की संख्या सुनिश्चित पद्धति से विनियोजित की गयी है। जैसे—पहले पाँच कांडो में प्रत्येक सूक्त में क्रमशः ४, ५, ६, ७, ८ मंत्र हैं। अथर्ववेद का लगभग चतुर्थांश ऋग्वेद से उद्धृत है। पंद्रहवे तथा सोलहवें कांडों में गद्य का प्रयोग भी है।

विषयवैशिष्ट्य

आचार्य सायण ने चारों वेदसंहिताओं पर भाष्य लिखा है। अथर्ववेद का सायण के नाम से प्राप्त भाष्य सायण का ही लिखा हुआ है—इस पर पश्चिमी विद्वानों ने शंका प्रकट की है। अस्तु, अथर्ववेदभाष्य की भूमिका में सायण कहते हैं—सर्वसारत्वादयं वेदः श्रेष्ठः-पहले के तीन वेदों की सार होने से यह वेद चारों वेदों में सर्वश्रेष्ठ है।

अथर्ववेद ११/४/१६ में (अनुवाद इस पुस्तक में दिया है) ओषधियों की विशेष कोटियाँ ही आथर्वणी और आंगिरसी बताई गईं है, जो अथर्वा और अंगिरस इन दोनों ऋषियों के नाम पर वर्गीकृत की गई होगीं। अभिचार, टोने-टोटके, आयुर्वेद, औषधियाँ, कामशास्त्र, शृंगारचर्चा, दार्शनिक चिन्तन इन सब विषयों का जैसा जमावड़ा अथर्ववेद में है, वैसा अन्य किसी वेद में नहीं। इन सब विषयों में अथर्ववेद सर्वोच्च शिखरों तक हमें ले जाता है। इसके साथ ही इन भिन्न भिन्न विषयों में कोई वर्गीकरण या पार्थक्य बुद्धि भी अथर्ववेद के कर्ताओं या ऋषियों के मन में नहीं लगती। वर्गीकरण बाद के सूत्रकारों ने किया है। अथर्ववेद के ऋषि प्रेतों को भगाने या पागल को ठीक करने के लिये प्रयुक्त अभिचार (६/१११) का निरूपण उसी तरह करते हैं, जिस तरह करते हैं, जिस तरह गम्भीर ब्रह्मज्ञान का। इसलिये यह अथर्ववेद में ही सम्भव था कि चिकित्साशास्त्र और अभिचार कर्म गलबाँही करते हुए साथ साथ चलते हैं। बहुसंख्य सूक्त ऐसे हैं, जिनमें रोगविशेष का इलाज करने वाली जड़ी बूटियों का उल्लेख है, साथ ये ही सूक्त उस रोग विशेष को दूर करने के टोटके भी हैं। ओझा या पुरोहित अपनी मन्त्रशक्ति और औषधि दोनों का एक साथ प्रयोग रोगी पर करता है। तक्मन् या ज्वर तथा चर्मरोगों की चिकित्सा के लिये अभिचार सूक्त

यहाँ हैं, किलास (कुष्ठ) को रजनी और श्यामा नाम की वनस्पतियों के द्वारा अभिचार के साथ ठीक करने की बात कही है (१/२३, २४)। अपचित् या अपची (गण्डमाला) की चिकित्सा को लेकर ढेरों सूक्त हैं। बहुत से अभिचार सूक्त जीवन के सकारात्मक पक्ष से जुड़े हैं— जैसे केशसंवर्धन के लिये तीन सूक्त यहाँ हैं, (६/२१, १३६, १३७), जिनमें सिर के चारों ओर काली जटाओं के रूप के फैले घने सुन्दर केशों की कामना है। मनु ने ऊपर उल्लिखित ११/३३ में अथर्ववेद या श्रुति का स्मरण इसे अभिचारशास्त्र का पर्याय मान कर ही किया है। अभिचार से जुड़ा हुआ एक ओर विषय जो स्मृतियों में या धर्मशास्त्रग्रन्थों में स्वतन्त्र रूप से विवेचित हुआ, प्रायश्चित्त है। पाप की अवधारणा और उसके प्रायश्चित्त के विधान अथर्ववेद के अनेक सूक्तों में हैं, यहाँ तक कि खड़े हो कर लघुशंका करने के लिये भी प्रायश्चित्त है (७/१०२)। अथर्ववेद के अनेक सूक्त यातुविद्या से सम्बन्धित हैं। यातुधानों या यातुविदों का चर्चा यहाँ आई है। यातु शब्द से बाद में जादू बना। यातु शब्द यहाँ अभिचार के अर्थ में है। इस यातु का विशेषज्ञ यातुधान है। यातुधान शब्द राक्षस के अर्थ में भी लौकिक संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त हुआ है। पर अथर्ववेद में तो यातुधान को भेषज के साथ नमन किया गया है—नमस्ते यातुधानेभ्यो नमस्ते भेषेभ्य: (अथर्व. ६/३/३)। यातुविद्या, ब्रह्मज्ञान दोनों ही कहीं न कहीं जा कर पहेलियों या उलटबासियों से जुड़ते हैं, अनेक अबूझ पहेलियों की भी भरमार अथर्ववेद में है। आभिचारिक पहेलियाँ, गूढ रहस्यज्ञान की सूचक पहेलियाँ या यौन सम्बन्धों की ओर इंगित करने वाली उलटबासियाँ सब सहज भाव से यहाँ आ गई हैं।

विषयों की विविधता की दृष्टि से अथर्ववेद चारों वेदसंहिताओ में अद्वितीय है। इसमें निम्नलिखित विषयों का समावेश हुआ है—(१) स्थालीपाक या अन्नसिद्धि, (२) मेधाजनन (बुद्धि बढ़ाने के उपाय), (३) ब्रह्मचर्य-शिष्य के लिये आदर्श दिनचर्चा, (४) राष्ट्रसंवर्धनग्रामों, नगरों या जनपदों तथा सारे देश की अभिवृद्धि और समृद्धि के लिये चिंतन, (५) परिवार का अभ्युदय-पुत्र-पुत्री, पशु, धन, धान्य वाहन आदि की प्राप्ति, (६) साम्मनस्य—समाज में सौहार्द की प्रतिष्ठा, (७) राजकर्म—प्रजा के अभ्युदय के लिये राजा के कर्तव्य, (८) सामरिक—सेना और युद्ध संबंधी विवेचन, (९) पापक्षयकर्म—पापों के निवारण के उपाय, (१०) भेषज्य—रोगों का उपचार, (११) संस्कारगर्भाधान, पुंसवन आदि संस्कार। (१२) अभिचार—मंत्रों के द्वारा दूसरो को वश में करना, शत्रु का नाश करना। (१३) दर्शन—तत्त्वमीमांसा विषयक चिंतन, (१४) आयुष्य—स्वास्थ्य तथा आयु बढाने के उपाय, (१५) याज्ञिक विधि। अथर्ववेद में प्रतिपादित विषयों का वर्गीकरण इस वेद से सम्बद्ध पाँच सूत्र ग्रन्थों में प्रतिपादित है। ये सूत्रग्रन्थ हैं—कौशिक, वैतान,

नक्षत्रकल्प, आङ्गिरसकल्प और शान्तिकल्प। कौशिक सूक्त में अथर्ववेद के विषय इस प्रकार बताये गये हैं—दर्शपूर्णमासविधि, मेघाजनन, ब्रह्मचारिसम्पद्, ग्राम-नगर-दुर्ग-राष्ट्र-लाभ, पुत्र-पशु आदि सम्पत् का साधन, साम्मनस्य, राजकार्य।

ये सूत्रग्रन्थ आनुष्ठानिक दृष्टि से आथर्वण क्रमों के अन्तर्गत आते हैं। अतः इनमें अथर्ववेद के सूक्तों की व्याख्या अनुष्ठानों मे विनियोग की दृष्टि से ही की गई है। इस पुस्तक के अन्त में दी गई टिप्पणियों में कौशिकसूत्र के आधार पर सूत्रों के विभिन्न अनुष्ठानों में विनियोग सूचित किये गये हैं।

कृषि और पशुपालन से सम्बन्धित दुर्लभ जानकारी इस वेद में है ही, वाणिज्य या व्यवसाय से जुड़ी तकनीकी शब्दावली और परिस्थितियों का भी निरूपण (३/१५ में) हुआ है। अथर्ववेद में लौकिक विषयों तथा उस समय की जनजातियों के आचारों का समावेश इसकी अपनी विशेषता कही जा सकती है। कभी कभी इसे त्रयी या तीन वेदों से कुछ घट कर भी माना गया—इसका एक कारण अथर्ववेद का लोकपरम्पराओं से गहरा संश्लेष भी हो सकता है। धर्मशास्त्रकारों ने तो यहाँ तक कह दिया कि स्त्रियों और शूद्रों का ज्ञान अथर्ववेद का पूरक है—सा निष्ठा या विद्या स्त्रीषु शूद्रेषु च (आपस्तम्भ ध०सू० २/११/२९/११) अभिचार और आयुर्वेद का जितना गहन ज्ञान अथर्ववेद में है, उतना वैदिक साहित्य के अन्य किसी ग्रंथ में नहीं। औषधियों के वर्गीकरण, उनके गुण तथा चिकित्सापद्धतियों के विवेचन की दृष्टि से अथर्ववेद आयुर्वेद के ग्रंथों व वैद्यों का पथप्रदर्शक है। इसके चौथे, छठे और दसवें कांडों में विशेष रूप में चिकित्साशास्त्र की चर्चा है। इसीप्रकार तांत्रिक परंपरा या आगमों का भी अथर्ववेद स्रोत है।

साम्मनस्य तथा विश्वशांति की उदात्त कामना, चिंतन की परिपक्वता तथा समाज को धारण करने और दिशा-निर्देश देने वाले महान् और उदात्त विचारों के समायोजन की दृष्टि से अथर्ववेद संपूर्ण वैदिक वाङ्मय में अनन्य है। संसार की प्रत्येक वस्तु को अथर्ववेद का कवि लोकमंगल के लिये विनियोजित करना चाहता है। पंच महाभूतों को लेकर प्रस्तुत की गई मंगलकामनाओं में वैश्विक दृष्टि और निसर्ग के प्रति राग का भाव है (१/६) राष्ट्र की बलशालिता और शक्ति की कामना अत्यंत ओजस्वी वाणी में अथर्ववेद में बार-बार व्यक्त की गयी है। राष्ट्राभिवर्धनसूक्त (१/२९) इसका उदाहरण है। शान्तकर्म में दुःस्वप्ननाश (६/४४, ४६) रोगनाश (६/४५) उल्लेख्य हैं।

प्रेम और शृंगार के रसमय सूक्तों की दृष्टि से तो अथर्ववेद सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में अनन्य है। दैहिक भाव का ऐसा आवेग और रागात्मकता का ऐसा उच्छलन अन्यत्र कम ही मिलता है। इस तरह के सूक्त स्त्री या प्रेमिका को वश में

करने के टोटके भी हैं, और आदिम रस-राग से भरी कविता के दुर्लभ नमूने भी वे हैं। यहाँ अनूदित सूक्तों में ९, १४, १५ और १९ इस दृष्टि से पठनीय हैं।

विश्वशांति, पारिवारिक सद्भाव और सौहार्द की अभिव्यक्ति की दृष्टि से अथर्ववेद का साम्मनस्यसूक्त (३/३०), परस्परमैत्रीकरण (६/४२), मन्युनाशन (६/४३), सौमनस्यसूक्त (६/५५) तथा राष्ट्रसभासूक्त (७/१२) हृदयग्राही हैं। निर्भय हो कर कर्तव्यपालन करने की कामना के साथ मनस्विता, शक्ति और संकल्प के साथ मंगलभाव का समन्वय इस वेद के प्रणेताओं ने किया है, जो अभयसूक्त (२/१५, १९/१५) में व्यक्त है।

अथर्ववेद के अनेक सूक्तों में निगूढ दार्शनिक चिन्तन अनुस्यूत है। पण्डित दामोदर सातवलेकर ने अथर्ववेद के लगभग पचहत्तर सूक्तों को ब्रह्मविद्या-प्रतिपादक मान कर उनका पृथक् संकलन व विवेचन किया है (अथर्ववेद ब्रह्मविद्या प्रकरण, पंडित दामोदर सातवलेकर)।

काल-तत्त्व के दार्शनिकस्वरूप का गहन विवेचन अथर्ववेद को दो सूक्तों (१९/५३. ५४) में मिलता है। विराट् तत्त्व की अनुभूति, कालचक्र के आवर्तन विवर्तन, मातृभूमि के प्रति अकुंठ भक्ति, कल्याणकामना तथा जीवनमूल्यों की मार्मिक अभिव्यक्ति पृथिवीसूक्त में की गयी है। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' के आदर्श को ऋषियों की समर्थ वाणी ने यहाँ प्रकट किया है। यहाँ निवास करने वाले मानव, जो तरह तरह की भाषाएँ बोलते हैं, तथा विभिन्न धर्मो का पालन करते हैं, सब कवि की दृष्टि में एक ही धरती माँ के बेटे हैं। 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'—धरती मेरी माँ है, और मैं इसका बेटा हूँ—यह इस सूक्त का केंद्रीय भाव है। विश्व के साहित्य में इस दृष्टि से यह सूक्त अपूर्व कहा जा सकता है। धरती के प्रति अनुराग तथा समस्त समाज के लिये कल्याणभाव इसमें निष्ठा से व्यक्त हुआ है।

वास्तव में जीवनदर्शन की गहन अभिव्यक्ति, उलटबासियों या पहेलियों के माध्यम से गूढ तत्त्वों के निरूपण तथा प्रतीकात्मकता में अथर्ववेद अद्वितीय है। जीवन के रहस्य को ले कर जो प्रश्न या मन्तव्य अथर्ववेद के ऋषि प्रस्तुत करते हैं, वे इस वेद को एक ओर उपनिषदों के तत्त्वज्ञान से सीधे जोड़ देते हैं, दूसरी ओर यह वेद अनेक ऐसी दार्शनिक अवधारणाओं और पारिभाषिक पदावलियों को सामने रखता है, जो परवती तत्त्वचिन्तन में दुर्लभ हैं। उदाहरण के लिये ज्येष्ठ ब्रह्म और उच्छिष्ट ब्रह्म, महत् ब्रह्म, परमेष्ठी प्रजापति, स्कम्भ, हंस आदि ऐसी ही अवधारणाएँ और पदावलियाँ हैं। ज्येष्ठ ब्रह्म और उच्छिष्ट ब्रह्म की परिकल्पनाएँ कदाचित् आगे चल कर वेदान्त में निराकार और साकार या निर्गुण और सगुण के प्रतिपादन का आधार बनीं।

ऋग्वेद से सम्बन्ध

अथर्ववेद का पूरा का पूरा बीसवाँ काण्ड ऋग्वेद से यथावत् ले लिया गया है। पाण्डेय (२००१ : २८१) के अनुसार बींसवें काण्ड को छोड़ भी दें, तो अथर्ववेद का १४ प्रतिशत से अधिक भाग ऋग्वेद से लिया गया है। इस चौदह प्रतिशत भाग में भी सारे के सारे मन्त्र यथावत् ऋग्वेद से नहीं लिये गये प्रतीत होते, कुछ मन्त्रों में तो अत्यधिक पाठ भेद है। यह सम्भव है कि इन मन्त्रों समानान्तर परम्पराएँ थीं, जो ऋग्वेद और अथर्ववेद में समवर्ती रूप से संग्रहीत हुईं। यह बात भी यहाँ ध्यान में रखने की है कि जो मन्त्र ऋग्वेद और अथर्ववेद में समान हैं, वे अथर्ववेद की अपनी विशिष्ट परम्पराओं से जुड़े मन्त्र हैं, जो आथर्वणिक परम्पराएँ कहीं जा सकती हैं। इनमें से आधा अंश तो ऋग्वेद के दसवें मण्डल का है, लगभग छठा अंश ऋ० के प्रथम मण्डल का और दसवाँ भाग सातवें मण्डल का है, शेष मण्डलों से जो अंश अथर्ववेद में ऋग्वेद का आया है, वह दोनों वेदों के समान अंश का लगभग आठवाँ भाग ही है (ब्लूमफील्ड, अनु०-सूर्यकान्त, १९६४ : १३)। तथापि यह कहना कठिन है कि आधुनिक विद्वान् जिन अंशों को ऋग्वेद से गृहीत मान रहे हैं, वे वास्तव में आथर्वण परम्परा में ही मूलत: रहे हैं या संकलन करने के क्रम में ऋग्वेद से ले कर उन्हें अथर्ववेद में जोड़ा गया है। अथर्ववेद की भाषा पर भी और अनुसन्धान अपेक्षित है।

कुल मिला कर अथर्ववेद भारतीय साहित्य की एक पहेली भी है। हो सकता है कि यह पहेली जितनी सुलझती जाये, उतनी ही उलझती भी जाय। वैदिक साहित्य और संस्कृति पर पिछले वर्षों में जो काम हुआ है, उसमें गोविन्दचन्द्र पाण्डेय का अवदान उल्लेख्य समझा जाता है। उन्होंने अपनी 'वैदिक संस्कृति' के परिशीलन में अथर्ववेद के विषयवैशिष्ट्य को लेकर कहा है—"परंपरा के अनुसार अथर्वेद जादू टोना नहीं है, बल्कि मानव अभ्युदय के लिये विद्या, मन्त्र और उपयुक्त विधान है। सायणाचार्य ने कहा है कि त्रयी आमुष्मिक फल देने वाली है, जब कि अथर्ववेद ऐहिक और आमुष्मिक दोनों फल प्राप्त कराता है" (पृ० २८२)। तथा—"अथर्ववेद संहिता का विचारों और भावों का बना वातावरण ऋक् संहिता और यजुष् संहिता से स्पष्ट रूप से भिन्न है। ऋक् संहिता में तीन लोक इस तरह से सम्बन्धित हैं कि पृथ्वी पर रहने वाला मनुष्य स्वर्गाभिमुख हो कर श्रौतयागों में प्रवृत्त होता है। ....आथर्वण का वातावरण न स्वयंज्योतियों के स्तवन का है, न बृहत् और जटिल श्रौत कर्मकांड का है, उसका वातावरण पार्थिव आभ्युदयिक और ऐहिक है।" (पृ० २८४)

अनुवाद के सन्दर्भ में

अथर्ववेद के कतिपय सूक्तों का हिन्दी में अनुवाद करने का विचार मेरे मन में उस समय आया, जब तीन वर्ष के लिये अतिथि आचार्य के रूप में थाईलैंड के सिल्पाकार्न विश्वविद्यालय में मुझे एम०ए० संस्कृत की कक्षा में अथर्ववेद पढ़ाने का अवसर मिला। वेद के विषय में अपने अल्पज्ञान या अज्ञान के कारण मैंने उस समय ब्लूमफील्ड, व्हिटने आदि पाश्चात्त्य पंडितों की व्याख्याओं का बहुत सहारा लिया। प्रस्तुत अनुवाद में इस सहारे से छुटकारा पाने की कोशिश की भी गई है। भारत लौट कर मैंने विश्वबन्धु द्वारा सम्पादित अथर्ववेद के संस्करण तथा उसमें छपे सायण भाष्य का चुने गये सूक्तों को समझने के लिये विशेष उपयोग किया, तथा सातवलेकर, जयदेव विद्यालंकार और त्रिवेदी जैसे आर्यसमाजी व्याख्याकारों का भी अध्ययन किया।

यास्क ने अपने निरुक्त में एक कथा बताई है—

"ऋषि उत्क्रमण कर रहे (संसार छोड़ कर जा रहे) थे। मनुष्यों ने देवताओं से कहा—अब हमारा ऋषि कौन होगा? देवों ने उन मनुष्यों को तर्क नामक ऋषि दे दिया। जिसने मन्त्रों के अर्थ की चिन्ता के लिये अभ्यूह स्वीकार किया। इसके कारण अनूचान जन जो कुछ अभ्यूह करते हैं, वह आर्ष हो जाता है।" (निरुक्त, १३, परिशिष्ट १२, लक्ष्मणस्वरूप का सं०, पृ० २२७)।

यास्क के द्वारा यहाँ निर्दिष्ट तर्क या अभ्यूह की पद्धति का अवलम्बन मैंने यहाँ अथर्ववेद के अनुवाद में लिया है।

ह्विटने ने अमेरिकन जर्नल ऑफ फिलोलॉजी के सप्तम खण्ड के अंक २-४ (१८८६) में उपनिषदों के अनुवाद के सन्दर्भ में जो कहा उसे उनके अथर्ववेद अनुवाद का सम्पादन करते हुए लेमान ने उद्धृत किया है, क्यों कि वह वेदों के अनुवाद पर भी लागू होता है। उनके अनुसार अनुवाद की तीन पद्धतियाँ हो सकती हैं—(१) किसी एक भारतीय भाष्यकार को प्रमाण मान कर अनुवाद किया जाये, (२) जितने भाष्य उपलब्ध हैं, सबका सन्दर्भ ले कर अनुवाद किया जाये, (३) पाठ के साथ एक भाषाविद् की हैसियत से बर्ताव किया जाए, और पाठ जिस रूप में है, उसे खोला जाए। स्वयं ह्विटने ने तीसरा विकल्प चुना।

मैंने प्रस्तुत अनुवाद में सायण की शरण भी ली है, तर्क या अभ्यूह का वरण भी किया है, और सातवलेकर, ब्लूमफील्ड, ह्विटने, ग्रिफिथ आदि विद्वानों से भी सन्दर्भ ग्रहण किया है।

निश्चय ही अथर्ववेद के अनेक स्थल वैदिक वाङ्मय के सबसे अधिक दुरूह अंश हैं। ग्रिफिथ जैसे पंडित ने तो कदाचित् ऐसे ही स्थलों से परेशान हो कर अपने अनुवाद को 'नितांत निरर्थकता के भीतर से अर्थ निकालने का प्रयास'

(attempt to bring sense out of utter nonsense) कह दिया था (ग्रिफिथ, भाग-२, चौखम्भा, वाराणसी, १९६६, भूमिका, पृ० १३)।

अनुवाद के अन्त में परिशिष्टस्वरूप दी गई टिप्पणियों में पाठ को ले कर उलझनों और व्याख्या के बहुविध विकल्पों की मैंने चर्चा की है। अपनी दृष्टि स्पष्ट करने के लिये यहाँ दो एक उदाहरण देना उचित होगा। ११।४ में प्राण का अर्थ ह्विटने breath या साँस करते हैं। मैंने भी इस पूरे सूक्त में प्राण के लिए साँस शब्द ही रखा है, पूरे सूक्त की संगति इसी अर्थ से बैठती है। समस्या वहाँ आती है, जहाँ ऋषि प्राण और अपान को प्राण की ही प्रेयसियाँ बताते हैं। देवीचन्द्र के अंग्रेजी अनुवाद में प्राण का अर्थ सर्वत्र केपीटल 'जी' के साथ God या ईश्वर किया गया है। ११.४.१८,१९ में बलि शब्द का अर्थ ह्विटने ने tribute किया है, देवीचन्द ने पहले मन्त्र में gifts of tribute तथा अगले में केवल tribute शब्द रखा है, जब कि इसी १९वें मन्त्र में बलिहृत: का अर्थ वे worshippers करते हैं। मैंने इसे दोनों मन्त्रों में पूजा का उपहार कहा है। वस्तुत: ग्यारहवें काण्ड के अधिकांश सूक्तों में दार्शनिक चिन्तन, आधिभौतिक दृष्टि, पहेलियाँ, उलटबासियों, सब एक साथ पिरोये लगते हैं। ११/५ ब्रह्मचारी के लिये सूक्त भी इसी प्रकार का है।

अथर्ववेद में वह शब्दावली सबसे अधिक है, जो संस्कृत भाषा में अन्यत्र प्रयुक्त नहीं हुई। ऐसे अनेक शब्द यहाँ प्रयुक्त हैं, जो संस्कृत के नहीं रहे होंगे। ३/९ में कर्शफ, विशफ, वध्रि, विषकन्ध, मष्कार्ह, खृगल, काबव आदि शब्द या ३/१७/३ में प्रफर्व्यम्, ४/१५ में तादुरी, खण्वखा३इ, खैमखा३इ जैसे शब्द हैं। हो सकता है कि उस समय जनजातियों में प्रचलित भाषा या बोली से लिये गये हों।

ग्यारहवें काण्ड के जो सूक्त यहाँ लिये गये हैं, उनमें अनेक मन्त्र ऐसे हैं, जिनके विषय में यह कहना कठिन हैं कि वे आध्यात्मिक रहस्य पर प्रकाश डाल रहे हैं, या वे उलटबासियाँ हैं, या अतिपुरातन लोकगीत हैं या आदिम जन जातियों के बीच बूझी जाने वाली पहेलियाँ हैं। कदाचित् वे ये सब एक साथ हैं। इस तरह के सूक्त सम्भव है कि चारों वैदिक संहितों में सबसे प्राचीन हों।

इसके पहले भी वैदिक सूक्तों का अनुवाद करने का दुस्साहस मैंने किया है। पहले के अनुवादों में मूल के निकट रहने की कोशिश नहीं की गई ऐसा तो नहीं था। पर उन में अनुवाद को अपनी ओर से सँवारने, स्पष्ट करने की चेष्टा या कुचेष्टा अवश्य की जाती रही। इस अनुवाद में मैंने अपने को अवश हो कर अथर्व को अर्पित कर देने का प्रयास किया है। मूल में जो ऊबड़खाबड़ लगता है, वह अनुवाद में भी वैसा ही रहने दिया है। यह सत्य है कि वेद तो आध्यात्मिक रहस्यों से भरा हुआ है। मेरा अनुवाद केवल अभिधा तक सीमित है, शब्द का जो

सीधा-सीधा अर्थ निकलता है, केवल वही रखा है, शब्द बाण बन कर कई अर्थों का और अनन्त प्रतीकों का सन्धान कर देता है, तो अनुवाद में अपनी ओर से मैंने ये अर्थ और प्रतीक जोड़ने की कोई कोशिश नहीं की है, यदि मूल वेद के शब्द किन्हीं के मन में असीम से जुड़े अर्थ खोलते हैं, तो उनका अनुवाद भी कुछ तो वैसा स्वत: करेगा, अनुवाद अपने को खोलेगा।

अथर्ववेद का अंग्रेजी में सम्पूर्ण अनुवाद विलियम ड्वाइट ह्विटने ने किया है, जिसका भूमिका और टिप्पणियों के साथ सम्पादन चार्ल्स रॉकवेल लेंमान ने किया है। प्रस्तुत अनुवाद में मुझे ह्विटने के कार्य से मदद मिली है। ब्लूमफील्ड के द्वारा अथर्ववेद के २१४ सूक्तों का अंग्रेजी अनुवाद 'सेक्रेड बुक्स ऑफ ईस्ट' शृंखला के बयालीसवें खण्ड में प्रकाशित है। भारतीय विद्वानों में शंकर पाण्डुरंग पण्डित का नाम तो अथर्ववेद का पर्याय सा बन गया है। पश्चिमी विद्वान् जब अथर्ववेद की पुरानी पोथियों से जूझ रहे थे, और उसके पाठालोचन के साथ संस्करण तैयार कर रहे थे, शंकर पण्डित ने अथर्ववेद का पारम्परिक पाठ वाले वेदपाथियों के साथ इसका पाठ तैयार किया। ह्विटने ने भी इस पाठ से सहायता ली है। वेबर, म्युर, लुडविग, ज़िमर, ब्लूमफील्ड, ह्विटने आदि विद्वानों का कार्य अपने आप में परम तपस्या और साधना का फल है। प्रस्तुत अनुवाद में इन सब पंडितों के कार्य से यथाशक्य सहायता मैंने ली है।

इस पुस्तक के अन्त में दी गई टिप्पणियाँ अथर्ववेद की विविध व्याख्यापद्धतियों, व्याख्या की समस्याओं और अनुवादक द्वारा अंगीकृत व्याख्या की संगति को सामने लाने की दृष्टि से दी गई हैं, इनका उपयोग वे विशेषज्ञ पाठक ही कर सकेंगें, जिन्हें अथर्ववेद मूल पाठ हस्तगत है। जो पाठक मूल और उसके अनुवाद की जटिलताओं तथा समस्याओं में न उलझना चाहें, पर अथर्ववेद का सामाजिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक और धार्मिक पीठिका में रुचि रखते हों, वे इन टिप्पणियों में प्रत्येक सूक्त के विनियोग वाले अंशों को अवश्य पढ़ें, इनमें उन्हें अथर्ववेद से जुड़े नृतत्त्वशास्त्रीय, कर्मकाण्डपरक व आचारमूलक धरातलों की झलक मिलेगी।

अथर्ववेद के चुने हुए सूक्तों के अनुवाद की यह संचयिका उन सभी साहित्यानुरागी पाठकों को अर्पित है, जो पूर्वाग्रहमुक्त निष्कलुष मन से वेद के काव्य को समझना बूझना चाहते हैं। विश्वविद्यालय प्रकाशन के श्री पुरुषोत्तमदास मोदी का कृतज्ञ हूँ, जिनकी तत्परता और साहित्यिक अभिरुचि के कारण मेरा यह लघु और विनम्र प्रयास सामने आ सका।

—राधावल्लभ त्रिपाठी

अनुक्रम

	पृष्ठ		पृष्ठ
१. मधुविद्या	१	१९. सौभाग्यवर्धन	३२
२. दीर्घायुःप्राप्ति	२	२०. शिशुसंवर्धन	३४
३. अभय	३	२१. अन्नसमृद्धि	३५
४. पशुसंवर्धन	४	२२. शाला	३६
५. शालानिर्माण	६	२३. सर्वाधारवर्णन	४२
६. गोष्ठ (गोशाला)	८	२४. ज्येष्ठ ब्रह्म	४४
७. कृषि	१०	२५. भात	५२
८. समृद्धिप्राप्ति	१२	२६. साँस	५६
९. काम का बाण	१४	२७. ब्रह्मचारी	६१
१०. साम्मनस्य (१)	१६	२८. उच्छिष्ट ब्रह्म	६७
११. वृष्टि	१८	२९. धरती	६८
१२. गायें	२२	३०. सूर्या का विवाह	८२
१३. गर्भाधान	२५	३१. अभय	९६
१४. कामात्मा (१)	२७	३२. दर्भ	९७
१५. कामात्मा (२)	२८	३३. कालसूक्त	९९
१६. गर्भदृंहण	२९	३४. देह	१०२
१७. साम्मनस्य (२)	३०	३५. दीर्घायुष्य	१०३
१८. अघ्न्या	३१	**परिशिष्ट**	**१०४**

●

१

मधुविद्या

मधु से जन्मी है यह लता
मधु से हैं हम तुम्हें खोदते
मधु से जन्मी हो तुम भी
हमें बना दो मधुमय तुम। १।

मधु हो मेरी जिह्वा के ऊपर
मधु हो मेरी जिह्वा के नीचे
तुम बनी रहो मेरे ही वश में
बनी रहो तुम
मेरे मन की सहचरी। २।

मधुमय है मेरा दूर दूर तक जाना
मधुमय है मेरा वापस आना
मधुमय है वह
जो कुछ मैं कहता हूँ
बना रहूँ मैं ऐसा ही मधु से सम्भृत। ३।

मैं मधु से भी अधिक मधुर हूँ,
मैं मधुमयी लता से भी अधिक मधुर हूँ
तुम मुझे घेर कर रहो – मुझ मधुमय शाखा को। ४।

झक्षु की तरह मैं घेरे रहूँ तुम्हें
यों ही चाहती रहो तुम मुझे
यों ही निकट मेरे बनी रहो तुम। ५।

●

२

दीर्घायुःप्राप्ति

हे अग्नि! आयु तुम्हीं ने दी है
मेरे लिये तुम्हीं ने चुना है यह वार्धक्य
तुम्हारे आगे घृत, तुम्हारे पीछे घृत
पी कर यह मधुमय गोघृत
इस बच्चे को बचाना
जैसे पिता अपने बच्चों को बचाये रखता है। १।

तुम इसे घेरे रहना अपनी आभा से
इसे तुम देना मृत्यु
जब यह पूरा जी ले बुढ़ापे तक
यह वस्त्र हमें दिया है बृहस्पति ने
सोम के पहनने के लिये। २।

बालक, तू इस वस्त्र को धारण कर
मंगलमय हो जिससे जीवन।
बालक तू जन जन का रक्षक बन
तू जीवित रह कर सौ वर्षों तक
संचित करे सम्पदा अक्षय। ३।

आ बैठ इस प्रस्तर पर
इस प्रस्तर के जैसा दृढ हो तेरा तन
सारे देव तुझे आयु दें सौ वर्षों की। ४।

यह हम ले आये हैं
तेरा पहले पहल पहना हुआ वस्त्र
देवता तुझे बचाये रहें सर्वदा
और तू बढ़े
और जन्म लें तेरे भाई तेरे पीछे
तेरी ही तरह बहुतेरे। ५। (२.१३)

●

३

अभय

जैसे डरते नहीं हैं धरती और आकाश,
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।१।

जैसे डरते नहीं है दिन और रात,
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।२।

जैसे डरते नहीं हैं सूर्य और चन्द्रमा
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।३।

जैसे डरते नहीं हैं ज्ञानी और वीर,
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।४।

जैसे डरते नहीं हैं सत् और असत्,
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।५।

जैसे डरते नहीं हैं भूत और भव्य,
और रहते हैं अक्षत
ऐसे ही निर्भय हो मेरे प्राण!।६।

(३/१५)

●

४

पशुसंवर्धन

जो चली गईं थीं,
आयें वे गायें
मेरे व्रज में नित्य लौट कर;
और संगिनी बन कर जिनके
चलती रहीं हवाएँ,
कितने कितने रूप अनोखे
और कितने कितने इनके नाम
जानते हैं जिनको केवल त्वष्टा ही,
गोष्ठ में उनके ले कर आयें सविता। १।

इस मेरे व्रज में
हिल मिल कर सब के सब पशु आ जाएँ,
जैसे बह कर आतीं हैं पानी की धाराएँ,
बृहस्पति हैं ज्ञानी,
वे उनको लाएँ,
देवी सिनीवाली चलें उनके आगे आगे मार्ग दिखाती,
हे देवी अनुमति, लौट कर आ रहे इन पशुओं को
करो नियमन्त्रित। २।

पानी की धाराओं की तरह
एक साथ आयें पशु सारे,
एक साथ आयें अश्व सारे,
एक साथ चलें पुरुष सारे।
और धान के ढेर के ढेर
बढें एक साथ,
यह मैंने हवि दी
उन सब की समृद्धि के लिये। ३।

इन गायों के दूध से मैं सींच रहा हूँ,
मैं बलवर्धक रस को घृत के साथ मिलाता हूँ
मैंने सींचा अपने वीरों को
क्यों कि मैं गायों का हूँ स्वामी,
और गाये स्थिर हो कर रहें मेरे पास। ४।

मैं लेता हूँ गायों का क्षीर,
मैं लेता हूँ धान्य और रस
जुट गये हैं मेरे पास वीर,
और पत्नी, यह घर। ५।

(२/२६)

५

शालानिर्माण

मैं निर्मित करता हूँ यहाँ एक घर
यह रहे सकुशल
घी की धार बहे इसमें
नीरोग हमारे वीर सारे
रहें सर्वदा इसमें अक्षत। १।

ओ मेरे घर, तू यहीं बना रह अचल प्रतिष्ठित
भरा भरा घोड़ों से गायों से और खुशी से
बहे तेरे भीतर धार दूध की, ऊर्जा की, घी की
उन्नत रहे तू परम सौभाग्य के लिये। २।

पुराने धान की गन्ध से भरा रहे तू।
तू अनाज के भंडारों से भरा हुआ है।
बहुत बड़ी है छाजन तेरी
साँझ ढलते ढलते
ललक कर लौटते हैं तेरे पास
बछड़े, लड़के और फाँदती गायें। ३।

इस घर को सविता, वायु, इन्द्र, बृहस्पति
बनाये रहें स्थिर
मरुत् बहाते रहें इसमें घी की धारा,
जल की धारा
और राजा भग बढाते रहें खेती। ४।

तुम सब भवनों की रानी हो
तुम हो आश्रय सुखदायी
देवों ने पहले पहल तुम्हें रचा है
फूस के कपड़े पहने
देती रहो हमें धन
और आसरा हम वीरों को। ५।

यह बाँस गाड़ा गया इसमें स्थिर स्तम्भ बना
शत्रुओं को यह करे दूर
इसके सेवक भी रहें सदा ही अक्षत
और हम सौ वर्ष जियें साथ सभी वीरों के इसमें। ६।

इसमें रहते हैं शिशु और तरुण,
चलने वालों के साथ बछड़ा भी
लौट कर आता है इसी में
इसमें स्थापित है भरा हुआ कलश
और दधि से भरा हुआ घट। ७।

हे नारी, ले आओ यह जल से भरा कलश
और घृत की धार अमृत से सम्भृत
परस दो यह अमृत पीने वालों को
हमारे इस घर को बचाये रहें यों ही सत्कर्म हमारे। ८।

यह मैं ले आया जल
यक्ष्म से रहित यक्ष्मा का नाशक
मैं सदा रहूँ इस घर में प्रतिष्ठित
अमृत के साथ, अग्नि के साथ। ९।

(३/१२)

●

६

गोष्ठ (गोशाला)

(गायों!), हम तुम्हें रखते हैं,
एक सुखद गोष्ठ में
भरपूर समृद्धि के साथ
दिनभर में जितना सुख मिल सकता है,
हम रचते हैं वह सब
तुम्हारे लिये। १।

अर्यमा तुम्हें एक करे,
पूषा और बृहस्पति तुम्हें एक करें,
इन्द्र जो धन की विजय करे,
वह भी तुम सब को एक करे। २।

साथ-साथ चलती हुई निर्भय
इस गोष्ठ में गोबर के साथ
सौम्य मधु की धार बहाती,
नीरोग तुम रहो यहाँ
और आओ पास हमारे। ३।

तुम बनी रहो यहाँ,
और बढ़ो शका* की तरह
तुम यहाँ लेती रहो जन्म
बनी रहे मुझ से पहचान तुम्हारी। ४।
मंगलमय हो गोष्ठ तुम्हारा
धान की फसल की तरह
बढ़ती रहो तुम इसमें
फिर फिर तुम जन्म लो यहाँ,
मैं तुम सबको अपने साथ करता हूँ। ५।

---

* टिप्पणी द्रष्टव्य।

हे गायों! तुम सब मिल कर
मुझ ग्वाले के साथ चलो
यह गोष्ठ तुम्हारा पोषक हो,
भरपूर समृद्धि में
तुम्हें होती जाओ अनेक
जीवन से भरी
और रहें हम पास तुम्हारे। ६।

(३/१४)

●

७

कृषि

सुख पाने के लिये
हल जोत रहे हैं मेधावी जन
बढा रहे हैं आगे हल का जुआ
बुद्धिमान् जन बढ़ रहे हैं देवों तक। १।

जोतें हम हल और बढ़ायें आगे जुआ
अच्छी तरह जुता खेत है
हम इसमें बीजों का वपन करें,
विराट् हो हमारे लिये यह अनाज की फसल
हसिये से काटें पके धान के ढेर। २।

वज्र के सदृश कठोर हल
जोत रहा है खेत,
उन्नत है इसकी काया, तनी हुई है इसकी मूँठ
यह चलता है और चली आती हैं पास हमारे
गायें, भेड़ें, रथ, वाहन और नारियाँ। ३।

इन्द्र साध कर रखे हल की रेखा
पूषा करता रहे इसका रक्षा,
और यह बहाती रहे हमारे लिये दूध का धारा
हर आने वाले वर्षो में। ४।

हल के नुकीले ये फाल
चीर दे धरती को भीतर तक धँस कर
सधे हों किसान
हाँकते चलें वे
इन बैलो को
जो बल में जुते हुए हैं;

हवि से तुष्ट हुए इन्द्र
इन औषधियों में भर दे ऊर्जा।५।

हल में जुते बैल, हल चलाता मनुष्य और हल
ये सब मिल कर
जोतें धरती
बँधी रहे डोर बैलों को नाथती
चलता रहे अंकुश उनके ऊपर।६।

हे वायु! हे सूर्य!, बनो सहायक मेरे,
तुमने स्वर्ग में बहाई है जो दूध की धार
उसे सींच दो इस हल के ऊपर।७।

हे हल की फाल,
नमन करते हैं हम तेरा,
तुम सौभाग्यवती बनो
बनी रहो तुम हमारे लिये
शुभ फलदायिनी।८।

घृत और मधु से सींची हुई फाल यह
सारे देवों से अनुमत,
अनुमत मरुद्गणों से
तू हमारे लिये दूध की धार बहा दे,
ऊर्जामय बन और घी से सम्भृत।९।

(३/१७)

●

८

समृद्धिप्राप्ति

दूध से भरी हुई हैं वनस्पतियाँ,
दूध से भरे हुए हैं मेरे वचन,
दूध से भरी हैं हजार हजार वस्तुएँ,
जिनका संचय मैं करता हूँ। १।

दूध से भरे धान्य को
मैंने जाना है,
और किया है उसका संचय;
जो संचय को देवता है,
हम करते हैं उसका आवाहन,
जो अयाजक के घर में विराजमान है। २।

पाँच दिशाओं में
रहते हैं ये जो
पाँच कुटुम्ब मनुजों के
वर्षा होने पर जल से उफनाती नदी की तरह,
ये सब समृद्ध हों। ३।

जैसे झरने की सौ सौ धाराएँ
बढ कर होती जातीं है सहस्र धाराएँ अक्षय,
ऐसे ही धान्य हमारा
हो सहस्र धाराओं वाला अक्षय। ४।

हे सौ सौ हाथों वाले मनुष्य तू
संचय कर (अपने सौ सौ हाथों से),
हे हजार हाथों वाले मनुष्य तू
बाँट दें फिर (अपने हजार हाथों से)
जो काम किये हैं हमने

वे भी हों यों ही
बढ़ बढ़ कर अक्षय।५।

तीन मात्राएँ हैं भूमि को धारण करने वालों की,
चार मात्राएँ हैं गृहपत्नी की,
इनमें जो सबसे बढी चढी है,
हम उससे करते है तेरा अभिमर्षण
संचय और संरक्षण
ये दो चर हैं प्रजापति के
ये दोनों स्फीत
अक्षय भूमा करें वहन।६।

(३/२४)

●

९

काम का बाण

कामना का ज्वार जो उमड़ रहा है भीतर ही भीतर
कोंच कोंच कर तुझ को
जगा दे तेरे भीतर अकुलाहट
कि तू रुकी न रह पाये, टिक न पाये शैया पर
यह जो है काम का भयंकर बाण
ले, मैंने उससे कर डाला तुझ को छलनी। १।

इसमें पीड़ा के पंख लगे हैं,
प्रेम का लोहा इसके आगे जड़ा हुआ है
यह साँधा गया है संकल्पों से,
ले यह मैंने इसे छोड़ा तुझ पर
अब यह छलनी कर डालेगा तुझको भीतर। २।

काम का यह तना हुआ बाण
सोख लेता है फेंफड़ों को
सोख लेता है मन
ऊपर फहराते पंखों वाला
मैं तेरा मन
बींध रहा हूँ इससे। ३।

चीर देगी पीर तेरा मन गहरे तक
सूखता मुँह लिये भागी चली आयेगी तू मेरे निकट
पीर से बिंध चुकी गहरे तक
तू बन जायेगी कोमल, टूट जायेगा तेरा मान
तू केवल मेरी होगी
मीठा बोलती हुई
संग निभाती हुई। ४।

मैं कोंचता हूँ तुझको इस कोड़े से
कि तू छोड़ देगी अपनी माँ को,
छोड़ देगी पिता को।
तू मेरे वश में हो जायेगी
मेरे मन के साथ चलेगी।५।

ओ मित्र, ओ वरुण,
उखाड़ फैंको इसके हृदय से
इसका चित्त
छितरा दो उसको
उसे पूरी तरह कर दो अवश,
कि यह मेरी हो कर रह जाये बस।६।

(३/२५)

●

१०

साम्मनस्य (१)

मैं बना रहा हूँ तुम्हारे हृदय एक से
मैं रचता हूँ तुम्हारे मन एक से
मैं तोड़ता हूँ तुम्हारे बीच से द्वेष
कि तुम एक दूसरे के यों हो जाओ
जैसे गाय हुआ करती है बछड़े के लिये। १।

पुत्र पिता का रहे अनुगत बन कर
माँ के मन से मिला रहे उसका मन
पति के लिये मधुमय वाणी बोले पत्नी
जो उसके मन को ठंढक पहुँचाये। २।

भाई का भाई से द्वेष न हो
बहिन को बहिन से द्वेष न हो
तुम सब अनुकूल बने रहो परस्पर
एक जैसे हों तुम्हारे व्रत
और मंगलमय हों वचन
एक दूसरे के लिये। ३।

यह मन्त्र मैंने तुम्हें दिया
जिससे देवता छोड़ कर नहीं जायेगें तुम्हारे बीच से
जिससे वे नहीं परस्पर द्वेष करेगें
तुम्हारे घर में
सब लोगों के मन को मन से जोड़ने वाला
यह मन्त्र मैंने दिया। ४।

तुम बड़ों का सम्मान करो,
तुम्हारे चित्त में रहे चित्त
तुम्हारे संगी तुम्हारे साथ रहें,

मधुमय वचन कहते हुए परस्पर
तुम्हारे साथ साथ चलो
मैं जोड़ता हूँ तुम्हे एकता की डोर से
मैं तुम्हारे मन एक से बना रहा हूँ।५।

एक ही प्याऊ हो तुम सब की
एक सा अन्न का हिस्सा हो तुम सब का
मैं जोत रहा हूँ तुम्हें बाँध कर एक डोर में
कि तुम सब मिल कर
इसी एक अग्नि को पूजो
जैसे पहिये के आरे
एक धुरी पर घूमा करते हैं।६।

तुम सब साथ साथ चलो
मैं जोड़ता हूँ तुम्हें एकता की डोर से
तुम्हारे मन एक से बना रहा हूँ
तुम में से हर एक का अन्न, जल और धन
सभी का हो,
यह मैंने किया संवनन*
जैसे देवता रक्षा करते हैं अपने अमृत की
साँझ सबेरे ऐसे ही तुम सब मिल कर
बचाओ भीतर के प्रेम का यह रस।७।

(३/३०)

●

* टिप्पणी द्रष्टव्य

११

वृष्टि

दिशाएँ हुमस कर
मिल जायें नभ से।
छिड़ जाएँ मेघ
हवा से जुटे परस्पर
आकाश का साँड
डकार उठे
फिर गिरें बौंछारें
धरती को तृप्त करें। १।

देखो कितने बलशाली और उदार मेघ हैं,
पौधों के भीतर
सरसा रहे हैं ये
पानी का रस
धरती को हर्षा दे
रह रह कर होती यह वर्षा
कि पौधों के अनन्त रूप
उस पर रच जायें। २।

हे मरुत्, देखो हम गा रहे हैं वर्षा के गीत
आकाश आज जान ले
कि क्या होता है जल की धाराओं का वेग
जल की ये धाराएँ
और रह रह कर होती यह वर्षा
इस धरती को हर्षित कर दें
कि पौधों के अनन्त रूप
उस पर रच जायें। ३।

ओ पर्जन्य,
गायें

हवाएँ
मिल कर दल के दल
गायें
गीत तुम्हारे
कभी यहाँ से कभी वहाँ से;
रह रह कर होती यह वर्षा
धरती पर बरस बरस पड़ती वर्षा।४।

ओ मरुत्, ले आओ सागर से
चमकती किरणों में उलझे मेघों के झुंड
बिछा दो उनको
यहाँ आकाश में इधर
कि आकाश का साँड
डकार उठे
फिर गिरें बौंछारें
धरती को तृप्त करें।५।

चीखो, चारों ओर और गरजो,
और मथ डालो सारा सागर
पर्जन्य!
बस भूमि को कर ही डालो सराबोर
कि सब ओर
उफन कर आयें
धाराएँ
फिर फिर रचो इनको।
लौट जाए घर
छीजती गायों वाला किसान अब।६।

उदार हो कर फूट पड़ें सोते
अजगरों की तरह बल खाते
मरुद्गण नीचे गिरा दें जल की धार
नीचे उतरते चले आयें
धरती पर मेघ
वर्षा करते धरती पर।७।

दिशा दिशा को चमका दें मेघ
हवाएँ बहे दिशा दिशा में
मरुद्‌गण नीचे गिरा दें मेघ
नीचे उतरते चले आये
धरती पर मेघ
पास और पास आते धरती के।८।

पानी की बौछारें, बिजलियाँ, मेघ
ये सब मिल कर
बचा लें तुम सब को
उदार हो कर फूट पड़े सोते
अजगरों की तरह बल खाते
मरुद्‌गण नीचे गिरा दें मेघ
नीचे उतरते चलें आयें
धरती पर मेघ
भिगो दें धरती को।९।

पानी की काया के भीतर
जलती है आग कोई
वही पाल रही है पौधों को
वही आग ले कर आये वर्षा
जन जन की प्राण
आकाश से झरता अमृत।१०।

प्रजापति है सूर्य
वह सागर के जल
में करता हलचल
सोखता है जल;
कि जिससे अश्व की तरह
शक्ति से भर कर
ओ मेघ चले आते तुम गरज गरज कर!।११।

पिता है यह सूर्य
जो भेजता है धार धार बौछार
जो प्राणदायिनी हो जाती है
घरघरा कर धार बह उठती है

ओ वरुण! इसे नीचे बहाओ और नीचे
ताकि बोल उठें चकत्तीदार मेंढक
पानी के स्वर में स्वर भरते। १२।

व्रत का पालन करने वाले ब्राह्मणों की तरह हैं ये मेढ़क
एक साल तक
एक स्थल पर टिके रह कर
अब भर रहे हैं स्वर
पर्जन्य से प्रेरित हो कर॥। १३।

बोलो बोलो ओ मेढकी, ओ दादुरि!
कुछ कहो वर्षा से
बीचोंबीच तैरती रहो सरोवर में
फैलाए चारों अपने पाँव।*। १४।

उठाओ यह मेघ, पानी से भरी मशक यह
जिसमें भरी हुई है बिजली भी
यह वर्षा यज्ञ है जीवन का
आनन्दित होती रहें इससे वनस्पतियाँ। १६।

(४/१५)

●

* इस मन्त्र के बाद का पन्द्रहवाँ मन्त्र, जो पैप्पलाद संहिता में नहीं मिलता, छोड़ दिया गया है। इसमें खण्वखा३इ, खैमखा३इ ये शब्द हैं। टीकाकारों के अनुसार ये मेढकियों के नाम हैं।

१२

गायें

प्रजावती हैं गायें,
पुरुरूपा हैं गायें
आ गई देखो गायें
गोष्ठ के भीतर
मङ्गल रचती ये गायें
गोष्ठ के भीतर
बनी रहे ये गायें
संग हमारे
सुखी रहे ये गायें
इन्द्र के लिये
भोर में दुहायें
चिरजीवी ये गायें। १।

जो यज्ञ कर रहा है
जो गा रहा है स्तुति
इन्द्र उसे दे देता है बहुत कुछ
और लेता नहीं है
जो उसका अपना है
और अधिक और अधिक वह बढाता है
उसकी सम्पत्
अप्रतिहत स्थिति में
पहुँचा देता है देवमय उसको। २।

नष्ट न होगीं ये गायें
तस्कर चुरा न पायेगें गायें
व्यथाजनक आयुध से

चोट नहीं पहुँचा पायेगा शत्रु उन्हें
गोपति यजन कर रहा है गायों के संग
शोभित हो कर। ३।

ये घुड़सवार जो धूल उड़ाते चले आ रहे हैं
वे पहुँच नहीं पायेगें इन गायों तक
ये गायें
नहीं ले जाई जायेगीं वधशाला तक
वे करेगी निर्भय विचरण
प्रशस्त चारागाह में
यजनशील मनुष्य की ये गायें। ४।

सौभाग्यमयी है गायें
इन्द्ररूपिणी हैं गायें
मेरे मन का ध्येय यही हैं गायें
सोम का प्रथम पेय हैं गायें
देखो लोगों किस तरह
गायें है वही, जो कि इन्द्र है
मैं हृदय से और मन से
चाहता हूँ उसे
वह जो कि इन्द्र है। ५।

ओ गायों तुम उसे पुष्ट कर दो
वह जो कृश है
जो श्रीविहीन है
उसको तुम भर दो शुभ प्रतीक से
मंगलमय कर दो यह घर
मंगलमय वाणी वाली ओ गायों
हमारी सभाओं[१] में
हम करते हैं चर्चा
कितना बड़ा तुम्हारा बल है। ६।

---

१. सभा वैदिक कालीन समाज में जनतान्त्रिक संस्था थी

चमकती हुई चारागाहों में
प्रजावती ओ गायों
तुम पियो सुन्दर प्रपाण[१] में भरा हुआ जल
तुम पर वश न चले चोर का
पापी तुम तक पहुँच न पाये
रुद्र का शस्त्र
हानि तुम्हें नहीं पहुँचाये। ७।

(४/२१)

●

१. मूल में शब्द सुप्रपाण है, जो गायों के पानी पीने के लिये बनाई गई स्वच्छ टंकी हो सकती है।

१३

गर्भाधान

जैसे तीर छूटता है धनुष से
यह अंग मेरा
पहाड़ से उतरता है
आकाश के गर्भ से आता है बाहर
अंग अंग का सार समोये
जो बो रहा है बीज। १।

जैसे धरती गर्भ धारण करती है
हम जीवों का
ऐसे ही यह गर्भ मैंने जो तुम्हें दिया
इसे धरती की तरह तुम्हें रखना है। २।

ओ सिनीवाली, बचाना इसके गर्भ के जीव को,
ओ सरस्वती, बचाना इसके गर्भ के जीव को
नीलकमल की माला धारे अश्विनीकुमार दोनों
बचाये रहें इसे। ३।

मित्र और वरुण बचाये रहें इसे
बृहस्पतिदेव बचाये रहें इसे
इन्द्र और अग्नि बचाये रहें इसे
विधाता भी बचाये रहें इसे। ४।

विष्णु इसे आकार दें, त्वष्टा इसे रूप दें,
प्रजापति इसे सींच दें
विधाता भी बचाये रहें इसे। ५।

जानते हैं वरुण जिसे
जानतीं हैं सरस्वती जिसे
जानता है वृत्त को मारने वाला इन्द्र जिसे
वह औषधि तू पी ले। ६।

हे अग्नि तुम्हीं हो औषधियों को धारण करने वाले
तुम जंगल के वृक्षों को जीवन देने वाले
तुम विश्व के प्राणों के प्राण
बचा कर रखना तुम
नन्हें इस जीवन के प्राण
ओ विधाता, श्रेष्ठ अपना रूप इसे देना।*।७।

(५/२५)

●

* मन्त्र ८-१३ छोड़ गये।

१४

कामात्मा (१)

जैसे लता लिपट जाती है सब ओर से
वृक्ष से
ऐसे ही तू लिपट मुझ से
कि तू सदा कामना से भरी रहे मेरे लिये
कि तू कभी छोड़ कर न जाए मुझे। १।

जैसे गरुड फड़फड़ाता है अपने पंख
सर्रा कर झपटता है नीचे
धरती पर
मैं तेरे मन की धरती पर
अपने पंखों से करता हूँ प्रहार
कि तू सदा कामना से भरी रहे मेरे लिये
कि तू कभी छोड़ कर न जाए मुझे। २।

जैसे भोर होते ही
धरती और आकाश पर छा जाता है सूरज
मैं छा रहा हूँ ऐसे ही
तेरे मन पर
कि तू सदा कामना से भरी रहे मेरे लिये
कि तू कभी छोड़ कर न जाए मुझे। ३।

(६/८)

●

१५

कामात्मा (२)

तू कामना कर मेरी देह की
मेरे पाँवों की
मेरी आँखों की
मेरी जंघाओं की
मैं तुझे सींच सकने वाला
तेरी आँखें, तेरे केश
कामना से सोख रहे हैं मुझ को। १।

यह मैंने तुझे बना दिया
मेरी भुजा के आसरे रहने वाली
यह मैंने तुझे बना दिया
मेरे मन के आसरे रहने वाली
कि तू मेरी इच्छा में रम जायेगी
कि तू मेरे मन के संग चलेगी। २।

ये घृत की माताएँ
ये सारी गाएँ
नाभि से दूध झर रहा है जिनके
प्रेम हृदय में भरा हुआ है जिनके
भर दें प्रेम हृदय में इसके। ३।

(६/९)

●

१६

गर्भदृंहण

जैसी धरती धारे रहती है
सब जीवों को
गर्भ में अपने
ऐसे ही गर्भ को धारे रह तू
जन्म देने के लिये एक नया जीवन। १।

जैसे धरती धारे रहती है
सारे पौधों को
ऐसे ही गर्भ को धारे रह तू
जन्म देने के लिये एक नया जीवन। २।

जैसे धरती धारे रहती है
ऊँचे नीचे पर्वत सारे,
ऐसे ही गर्भ को धारे रह तू
जन्म देने के लिये एक नया जीवन। ३।

जैसे धरती धारे रहती है
विविधता से भरी समूची इस दुनिया को
ऐसे ही गर्भ को धारे रह तू
जन्म देने के लिये एक नया जीवन। ४।

(६/१७)

●

१७

साम्मनस्य (२)

साथ साथ तुम जानो,
सम्पृक्त तुम सब परस्पर बनो,
जिस तरह देवता भाग ग्रहण करते हैं,
एकमत हो कर। १।

समान हो मन्त्र इन सब लोगों के
समान हो मति सबकी, समान हो व्रत,
समान हो चित्त
समान हवि से मैं आहुति देता हूँ इन सब के लिये
एक से चित्त वाले हो कर
तुम सब यहाँ प्राप्त करो इसे। २।

समान हों तुम्हारे विचार
सम हों तुम्हारे हृदय, समान हो तुम सबके मन
जिससे बना रहे मनोहर,
तुम लोगों का साथ होना। ३।

(६/६४)

●

---

* टिप्पणी द्रष्टव्य।

१८

अघ्न्या

जैसे जुए के खेल में
संगी होते है
मांस और सुरा
जैसे पाँसे
उमगते हैं द्यूत के पटल पर
जैसे कामना से भरे पुरुष का मन
झुकता है स्त्री के लिये
ऐसे ही है अघ्न्या* गउ,
तेरा मन झुक जाये तेरे बछड़े के लिये। १।

जैसे हाथी जोड़ता है
अपना पग उठा कर
हथिनी के पग से
जैसे कामना से भरे पुरुष का मन
बँध जाता है स्त्री से
ऐसे ही हे अघ्न्या गउ,
तेरा मन झुक जाये तेरे बछड़े के लिये। २।

जैसे पहिये का घेरा
जैसे उसके भीतर का वलय, जैसे उसकी घुरी
बँधे होते हैं पहिये के भीतर भीतर
जैसे कामना से भरे पुरुष का मन
बँध जाता है स्त्री से
ऐसे ही हे अघ्न्या गाय,
तेरा मन बँध जाए तेरे बछड़े से। ३।

(६/७०)

●

* अघ्न्या = जिसका वध वर्जित है।

१९

सौभाग्यवर्धन

दुर्भाग्य को दूर हटानेवाली
ओ मेरी सौभाग्य-लता
सौ सौ हैं तेरी शाखाएँ
तैंतीस हैं तेरे अंकुर
सहस्र पर्णों वाली इस लता से
हे कामिनी, मैं तपा दूँगा तेरा मन। १।

तप उठे तेरा मन
मेरे लिये
तप उठे तेरा मुख
मेरे लिये
तू मेरी कामना में भर
पूरी की पूरी तप उठे
तपता हुआ मुँह लिये घूम। २।

हे प्रेम जगाने वाली, फलने वाली भूरे रंगों की आभा वाली
हे कल्याणमयी लता! जगा दे मन में पीर
इसके मन में, मेरे मन में
कि एक से हो जाएँ दोनों
इसका मन, मेरा मन। ३।

जैसे प्यासा घूमता है बिन पानी
सूखता जाता है उसका मुँह
ऐसे ही सूख सूख तू मेरी कामना में भर कर
और सूखता मुँह लिये यों हीं घूम। ४।

जैसे टुकड़े टुकड़े कर के साँप के
जोड़ देता है उन्हें नेवला
ओ लता, कामनाओं के टुकड़े
जोड़ दे इसी तरह।५।

(६/१३९)

●

२०

शिशुसंवर्धन

देखो दो बाघों की तरह निकल आये इसके मुँह में
दो दाँत
जैसे ये खा ही जायेंगे बच्चे के माता और पिता को*
ओ ब्रह्मणस्पति, ओ जातवेदम्!
मंगलमय हों ये दोनों दाँत!। १।

खाओ तुम यह भात खाओ तुम यह जौ,
यह उड़द और ये तिल तुम खालो
और रत्नों के आधान के लिये
हिंसा किन्तु न करना माता और पिता की। २।

यह हमने आह्वान किया
इन उगते दाँतों का
तुम दोनों की जोड़ी
बनी रहे सुन्दर मंगलमय
अपना घोर रूप तुम
और कहीं दिखलाना
माता और पिता दोनों को
कभी न लेकिन क्षति पहुँचना। ३।

(६/१४०)

●

* टिप्पणी द्रष्टव्य

२१

अन्नसमृद्धि

उठ ऊपर और बढ़ती जा
ढ़ेर की ढ़ेर
ए जौ की फसल!
अपने भीतर की ऊर्जा से
सारे पात्रों को भरे दे
आकाश से कोई वज्र
तेरे ऊपर गिर कर तुझे न मारे। १।

जब हम बोलते हैं उससे मधुर वचन
तो वह सुनती है
वह देवी है।
ए जौ की फसल, ऊपर उठ, आकाश की तरह
बढती जा अक्षत, समुद्र की तरह। २।

अक्षत रहें हम सब
तेरी रखवाली करने के लिये
जो यहाँ जुटे हैं,
अक्षत रहें तेरी ढ़ेरियाँ
अक्षत रहें वे
जो तुझे दे देगें,
अक्षत रहें वे सब,
जो तुझे खायेगें। ३।

(६/१४२)

●

२२

शाला

सारे साज सामान और उपकरण
सारे के सारे कलपुर्जे
जो इस घर में लगाये हमने
उन सब के साथ
अब यह विश्राम करे। १।

हे हमारे घर, दु:ख को दूर हटाने वाले घर!
हमने जिन पाशों से, जिन गाँठों से तुझ को जकड़ा
हम उन्हें शिथिल करते हैं,
जैसे बृहस्पति ने वाणी से
शत्रु की सेना को नष्ट किया। २।

कारीगर ने कस कर ताने और बाँध दिये जो बन्धन
उन्हें हम इन्द्र के साथ शिथिल करते हैं
कुशल शस्ता की तरह। ३।

ये बाँस की बल्लियाँ उनके पुर्जे और बन्धन
उनके ऊपर की छाजन
जो चुन चुन कर हमने रची
उसे हम करते हैं शिथिल। ४।

यह सँडसी, यह चटाई, ये विलास के स्थल
जिन्हें ले कर
मान के साथ खड़ा रहा यह घर
हम उन सब को करते हैं ढीला। ५।

जो छींके हम ने बाँधे थे भीतर
सुखकर और मनोहर
हम उतारते हैं उन्हें अब

मान के साथ खड़ा रहा यह घर
इसे छोड़ते समय
यह बना रहे मंगलमय। ६।

यह हविर्धानी, यह अग्निशाला ये कमरे घर की बहुओं के
इन सब के साथ हे दिव्य घर
तुम बने रहे देवों के घर। ७।

हजार आँखों वाला
आकाश की रेखा पर गहना
बन कर तना,
फैला दिया था हमने जो रक्षा का जाल
हितकर
हम पूजन कर
उतारते हैं इसको अब। ८।

ओ घर, अब जो तुम को अपनाए
और जिसने तेरे आकार बनाये
ओ मान के साथ खड़े घर
दोनों जियें लम्बी आयु तक। ९।

हमने जो अंग अंग के जोड़ खोल दिये तुम्हारे
उन्हें फिर से कस लो
साफ चमका लो
अब स्वागत करो इसका
यह जो अब आ रहा है
तुम्हारे साथ रहने को। १०।

ओ घर!
प्रजा के लिये प्रजापति ने तुझे गढ़ा है
जंगल से पेड़ जुटा कर
हम नमन करते हैं उसे
जिसने तुझे निर्मित किया
उसे जिसने हमें तुझे दिया
हम नमन करते हैं उस अग्नि को

जो तेरे भीतर जलती है
जो ऊपर ऊपर बढ़ती है
ओ गृहपुरुष
तुझे नमन हम करते हैं। ११-१२।

हम नमन करें उन गायों को
उन अश्वों को
जो तुझ में रहते रहते जन्मे हैं
ओ भरपूर जन्म देने वाले घर
ओ सन्तानों से भरे भरे घर
तेरे बन्धन अब हम ढीले करते हैं। १३।

तू आग छिपाये है भीतर ही भीतर
तू धारे है गायों को अपने भीतर
ओ भरपूर जन्म देने वाले घर
ओ सन्तानों से भरे भरे घर
तेरे बन्धन अब हम ढीले करते हैं। १४।

धरती से फैला हुआ गगन तक
अनन्त व्योम जो यह है,
उसमें खड़ा किया हमने घर
तेरे लिये
वह अन्तरिक्ष
जो धरती और गगन को नाप रहा है
उससे हमने तेरा उदर गढा है
जिसमें हम रख सकें अपनी निधि
जिसके लिये स्वीकार करें हम यह घर। १५।

ओ ऊर्जा से भरे हुए घर
दूध की नदी बहाते घर
इस धरती पर बने सुदृढ़ घर
जगत् का सारा अन्न
सँभाल कर रखे रहे घर!
तू चोट न पहुँचाये
उनको जो तुझमें रहने को आये। १६।

ओ तिनकों से ढके ढके घर
फूस के कपड़े पहने घर!
ओ घर
तू जो सारा संसार
समोये अपने भीतर
जैसे समो लेती है जन जन को रात
अंक में अपने भीतर;
धरती पर उन्नत
अपने पाँवों पर हथिनी की तरह
खड़े हुए घर!। १७।

मैं करता हूँ बन्द
साँकल तेरे किवाड़ पर
जैसे वरुण रात में
करता है तुझे बन्द
और खोल दिया करता है
सूरज प्रातः आ कर। १८।

मन्त्रों से निर्मित घर
कवियों से रचा हुआ यह घर
इन्द्र और अग्नि बचायें इसको
सोम से सदा प्रतिष्ठित
बना रहे घर। १९।

घोंसले के भीतर
एक और घोंसला
एक गर्भ के भीतर
पल रहा गर्भ
उससे जन्म लेता मनुष्य
मनुष्य से सब संसार उपजता। २०।

घर की देवी
दो कमरों वाली हो, चार कमरों वाली या छह कमरों वाली
अथवा हो आठ, दस कमरों वाली

अग्नि गर्भ में धारे रहती है वह
उससे रक्षित मैं सोता इसमें निर्भय। २१।

हे मेरे घर! मैं खड़ा हुआ पश्चिम में
तुम हो मेरे सम्मुख, कभी न हिंसा करने वाले,
मैं प्रवेश करता हूँ तुम में
अग्नि और जल
ये तुम में बने हुए
जैसे ऋत के पहले दो द्वार खुले हों। २२।

मैं भरता हूँ तेरे भीतर का जल अक्षय
जो क्षय को हरता है
करता है यक्ष्मा का नाश
मैं प्रवेश करता हूँ घर के भीतर
कभी न बूझने वाली आग साथ में मेरे रहती है। २३।

अपनी जंजीरें खोल दो हमारे लिये ओ घर,
हमारे लिये हल्के बन जाओ तुम
कम कर दो अपना भार
इतने हल्के कि हम तुम्हें उठा सकें
नववधू की तरह। २४।

घर की यह जो महिमा है
नमन करते हैं इसको पूर्व दिशा से
और नमन करते हैं देवों को। २५।

घर की यह जो महिमा है
इसे नमन हम करते हैं दक्षिण से
और नमन करते हैं देवों को। २६।

घर की यह जो महिमा है
हम इसे नमन हम करते हैं पश्चिम से
और नमन करते हैं देवों को। २७।

घर की यह जो महिमा है
हम नमन करते हैं उत्तर से इसको
और नमन करते हैं देवों को। २८।

घर की यह जो महिमा है
हम नमन करते हैं इसको ध्रुव दिशा से
और नमन करते हैं देवों को। २९।

घर की यह जो महिमा है
हम नमन करते हैं इसको ऊर्ध्व दिशा से
और नमन करते हैं देवों को। ३०।

घर की यह जो महिमा है
हम नमन करते हैं इसको हर एक दिशा से
और नमन करते हैं देवों को। ३१।

(९/३)

●

२३

सर्वाधारवर्णन

उसके किस अंग में रहता है तप
किस अंग में उसके ऋतु टिका हुआ है,
उसके भीतर कहाँ पर है व्रत
और कहाँ पर रहती है श्रद्धा
उसके किस अंग में प्रतिष्ठित है सत्य ?।१।

उसके किस अंग से चमकती है आग
किस अंग से बहता है पवन,
किस अंग से नापता है चन्द्रमा
इस भुवन को
जो उसी का एक अंग है।२।

उसके किस अंग में टिकी है धरती
किस अंग में टिका है अन्तरिक्ष,
किस अंग में रह रहा है आकाश,
और आकाश के परे जो कुछ
वह उसके किस अंग में है ?।३।

किस की ईप्सा में चमक रही है आग
किस की ईप्सा में बह रहा है पवन,
ये सब ढकी हुई वस्तुएँ
किस की ईप्सा में
चली जा रही हैं
वह कौन अंग है उस का
जिस के लिये चल रही हैं ये सब ?।४।

कहाँ चले जाते हैं पखवाड़े,
कहाँ चले जाते हैं महीने,
किस में जा कर

बिला जाते हैं
सारे के सारे संवत्सर
जिस में जा रही हैं ऋतुएँ,
और वह भी जो ऋतुओं के भीतर है,
बताओ वह अंग उसका
कौन सा अंग है वह ?।५।

दो लड़कियाँ है
एक काली एक गोरी
जो बुन रही है करघे पर
कपड़ा
जिसमें से छह किरणें फूट रही हैं,
एक खींचती है धागे
दूसरी बुनती है उनको
रुकती नहीं, वे दोनों
न पहुँचतीं है अन्त पर।४२।

वे थिरक रहीं हैं कुछ ऐसे,
कि मैं जान नहीं पाता हूँ
उनमें कौन आगे है कौन पीछे
ऊपर जो पुरुष है,
वह इस जाल को बुन रहा है कि खींच रहा है,
और उसे आकाश की पीठ पर धर रहा है।४३।

उस जाल से फूटती किरणें
आकाश के ऊपर जा चढी हैं,
ये जो साम मन्त्र हैं,
ये बन गये हैं इसे बुनने के लिये ताना और बाना।*।४४।

(१०/७)

●

* ४४ मन्त्रों में से प्रथम पाँच व अन्तिम तीन अनूदित

२४

ज्येष्ठ ब्रह्म

जो भूत, भविष्य और वर्तमान को
इस सब को
किये अधिष्ठित
जो है केवल प्रकाशमय
उस ज्येष्ठ ब्रह्म को हम करें नमन। १।

वह थामे है इन सब को
यह आकाश और यह धरती
ठहरे हैं उसके कारण,
उसी एक स्कम्भ से
यह सब ले रहा है साँस
और पलकें सबकी झपक रहीं है
एक उसी के कारण। २।

तीन तरह की प्रजाएँ करती हैं अतिक्रमण
पहली तो पहुँच जाती है सूर्य तक
दूसरी रजो लोक को मापती है
और तीसरी दिशाओं तक पहुँचती है। ३।

बारह धुरियाँ हैं, घेरा है एक,
तीन नाभियाँ हैं उस पहिये की
कौन भला उसको जाने पहचाने ?
लगी हुई हैं उसमें तीन सौ साठ खूँटियाँ
साठ कीलें भी, जो रहती हैं अविचल। ४।

हे देव सविता, यह तुम जान लो
कि ये छह जोड़े हैं
और एक है अकेला

यह जो एक अकेला है इनके बीच,
इसी से वे चाहते हैं सम्बन्ध जोड़ना।५।

एक गुहा के भीतर
है कोई स्थान महान् पुराना
यह सब जो साँस ले रहा है और चल रहा है,
इसी में यह सब कुछ है अर्पित और प्रतिष्ठित।६।

एक पहिया है
एक ही है उसका घेरा, हजारों आरे इसमें लगे हुए हैं
वह घूम रहा है, आगे भी पीछे भी
उसके आधे से रच दिया गया है यह निखिल विश्व
पर कहाँ है आधा
जो शेष रह गया?।७।

जिसे उठाते हैं पाँच,
वह चलती है आगे आगे
उसमें जुते अश्व ले जा रहे हैं उसे आगे
उसका आना तो दिखता है,
पर नहीं दिखता है उसका जाना
यहाँ जो बहुत दूर है, वह वास्तव में पास है
जो बहुत पास है, वह है दूर।८।

एक बर्तन है औंधा रखा हुआ
मुँह है जिसका तिरछा
इसमें रखा हुआ है भीतर
नाना रूपों वाला यश,
उसमें बैठे हैं सात ऋषि
जो उसके रखवाले हैं।९।

जुती हुई हैं इस पहिये में ऋचाएँ,
वे जुती रहती हैं आगे,
वे जुती रहती हैं चारों ओर
वे जुती रहती हैं सब तरफ
जिनसे यज्ञ लिया करता है विस्तार पूर्व में

मैं पूछता हूँ तुमसे
इन ऋचाओं में सबसे पहली है कौन ?। १०।

जो हिल रहा है, जो गिर रहा है
जो टिका हुआ है
जो साँस ले रहा है, जो है निस्पन्द
जो निमेष करता है जो निर्निमेष है,
वह समाया हुआ है सकल विश्व में
वह धारे है इस धरती को
वह इन सब में मिल कर है एक। ११।

यह अनन्त है
जो फैला है यहाँ सभी ओर
अनन्त और सान्त दोनों मिल जाते हैं एक दूजे से
वह अतीत की भविष्य की
और जो है उस सबकी रखवाली करता
साथ चला करता है। १२।

इस सब के गर्भ में अदृश्य रह
चलता है प्रजापति
वह अपने को करता है उत्पन्न विविध रूपों में
उसके आधे से यह निखिल भुवन जन्म लेता है
जो शेष रह गया जो आधा
उसको कैसे पहचाना जा सकता है ?। १३।

मटके से जल को भर भर कर लाता है कहार
आँखों से ताकते भर है सब इसे
पर नहीं जानते हैं मन से। १४।

वह पूरा है
पर दूर है,
वह अधूरा है, पर दूर है,
वह महायक्ष है भुवन के बीचोबीच विराजा,
जो धारण करते है सकल राष्ट्र को
वे अर्पित करते है पूजा उसको। १५।

जहाँ से उगता है सूरज
और जहाँ से वह अस्त हुआ करता है,
सीमा है वह,
कोई नहीं पहुँच पाता उसके पार। १६।

कहतें हैं ज्ञानी जन
जो तत्त्व चिर पुरातन, और मध्यवर्ती या नूतन
वह सब वे कहते है आदित्य की ही स्तुति में
दूसरे अग्नि के लिये
और तीसरे त्रिवृद् हंस के लिये। १७।

स्वर्ग की ओर उड़ रहा है वह हंस
हजार दिवसों तक फैले उसके पंख
वह सारे देवों को धारे है अपने वक्षःस्थल पर
और सारे भुवनों को
तकता हुआ चला जा रहा है। १८।

वह तप करता है सत्य के द्वारा ऊपर ऊपर
वह देखा करता है ज्ञान के द्वारा नीचे-नीचे
वह प्राण से खींचता है प्राणवायु तिरछे तिरछे
उसी में प्रतिष्ठित है ज्येष्ठ ब्रह्म। १९।

जो जान लेता है उन दो अरणियों को
जिनसे वसु का मन्थन होता है,
जो जान लेता है उसी ज्येष्ठ ब्रह्म को
वह ही जान सकेगा महत् ब्रह्म को। २०।

पहले पहले वह जन्मा बिना चरण के
फिर उसने अपने को सम्पूर्ण किया
और वह हुआ चार चरण वाला वह ही भोग्य बना
और उसने ही प्राप्त किया भोजन। २१।

जिसने उसी सनातन श्रेष्ठ देव को जाना
वह ही भोग्य हुआ
वह ही हुआ अन्न को खाने वाला। २२।

वह ही है सनातन
वह ही होता है फिर फिर नया,
इसी के परिवर्तित होते रूपों से
हुआ करते है दिन और रात। २३।

सब कुछ उसी में समाया हुआ है
सौ हो, हजार दो, दस हजार हो, या कि
लाख हो या असंख्य हो
इसके देखते देखते
वह आघात इसी पर करता है
जिससे यह और प्रकाशित होता जाता है। २४।

एक है जो बाल से भी अधिक सूक्ष्म है
और दूसरा है जो दिखता ही नहीं,
जो इन दिनों का करती है आलिंगन
प्रिय है मुझ को वह देवी। २५।

वह कल्याणी है और अजर है,
वह मर्त्य जनों के घर में रह कर
बनी हुई अमर है।
वह जिसके लिये रची हुई है
वह सो रहा है
वह जिसके लिये होती है, वह वृद्ध हो रहा है। २६।

तुम ही स्त्री हो, तुम ही हो पुरुष
तुम ही बालक हो हो तुम्हीं बालिका
तुम वृद्ध होते हो और चलते हो डंडे का सहारा ले कर
तुम्हीं होते हो प्रकट,
सर्वत्र विश्वतोमुख हो कर। २७।

चाहे इनका पिता हो, या पुत्र
चाहे इनमें ज्येष्ठ हो या कनिष्ठ,
एक ही देव है जो इन सब के मन में प्रविष्ट है,
वही सबसे पहले हुआ और वह ही गर्भ में फिर फिर
प्रविष्ट होता है। २८।

वह पूर्ण से बनता है पूर्ण,
वह पूर्ण से सींचा जाता है,
हम जान सें उसे,
जिससे वह सींचा जाता है। २९।

सनातन है यह धरा
सनातन काल से वह जन्मी है,
वह है चिर पुरातन, और घेरे है सब कुछ को,
वही है महादेवी, वह प्रकाशित करती है उषाओं को,
हर एक जो कुछ भी यहाँ ले रहा है साँस
वह उस सब के रहती है साथ साथ। ३०।

वह एक देवी है
सबकी रक्षा करने वाली
वह सनातन सत्य से परिवृत है,
उसी के रूप से ये वृक्ष हरे भरे हैं
और हरे पत्तों से भरे हुए हैं। ३१।

वह नित्य समीप है और छोड़ता नहीं है,
वह नित्य समीप है और दीखता नहीं है,
यह देव का काव्य है
जो न मरता है, बुढ़ाता है। ३२।

वह अपूर्व ही कोई है देवता
जिससे प्रेरित हो कर
वाणी वर्णन करती है
इन चीजों का ठीक ठीक जो जैसी हैं वैसा,
वर्णन करती करती वे वाणियाँ
पहुँचती हैं जहाँ,
उसी को ज्ञानी जन कहते हैं
परम पद ब्रह्म का। ३३।

जैसे पहिये की धुरी में आरे लगे होते हैं
ऐसे ही सारे देव और मनुष्य जिसमें आश्रित हैं,
मैं पूछता हूँ उस फूल के बारे में

जो जल से जन्म लेता है
और रहता है अपनी माया से आच्छादित हो कर। ३४।

जिनसे प्रेरित हो कर
बहती है हवा,
जो धारण करते हैं पाँचों दिशाएँ,
जो अर्पित आहुति को जितनी अर्पित की उसे कहीं अधिक
गिनते हैं,
कौन हैं वे जल को आगे ले जाने वाले देव ?। ३५।

इनमें से एक रहता है धरती पर
और एक अन्तरिक्ष में छाया है,
उन में से जो है धारण करने वाला,
वह द्युलोक को है धारे रहता,
और दूसरे रक्षा करते हैं दिशा दिशा की। ३६।

एक सूत्र है
जिसमें पिरोई हुई है यब सब जनता,
इस सूत्र के सूत्र को
जो जान सेता है
वही जान पाता है
परम तत्त्व को। ३७।

मैंने जाना है वह सूत्र
पिरोई है जिसमें यह सब जनता,
मैंने जाना है उसे
जो है परम तत्त्व। ३८।

जो अग्नि जल रहा है
द्युलोक और पृथिवी के बीच
जिससे यह सारा जगत् चल रहा है,
जहाँ दूर-दूर तक छाई है केवल एक वही रक्षा करने वाली
उस समय कहाँ था वायु ?
वायु इस समय जल में प्रविष्ट था,
और देव भी सब थे जलमय ही,

उस समय वह स्थित था बृहत् रजस् का प्रमाण,
वायु था उस समय सूर्य किरणों में प्रविष्ट हो। ४०।

अमृत के भीतर से पाया गायत्री को
साम के भीतर से साम को पाया,
जिन्होंने
वे भी कहाँ देख पाये उसको
जो था अजन्मा। ४१।

वह सत्य धर्म मय देव सविता
है वसु का निवेश और संगम,
वह स्थिर रहता है इन्द्र के समान
जब जब धन सम्पत् के हित
समर छिड़ा करता है। ४२।

नौ दरवाजों वाला
तीन गुणों से आच्छादित
पुंडरीक है
जिसमें कोई यक्ष आत्मवित् रहता है
उसे जानते है ज्ञानी जन ही। ४३।

वह निष्काम धीर, अमृतमय स्वयम्भू है
वह तृप्त हुआ रस से वह कहीं से भी नहीं है कम,
जो जान गया उस धीर, अजर, युवा आत्मा को
मृत्यु से वह भयभीत नहीं होता है। ४४।

(१०/८)

●

२५

भात

बृहस्पति मस्तक है भात का,
और है ब्रह्म इसका मुख।
धरती और आकाश
कान हैं इसके
सूर्य और चन्द्रमा
आँखें हैं इसकी
सात ऋषि
प्राण और अपान हैं।
आँखों के मूसल से
कुटता है यह
कामना की ओखली में। १-३।

दिति इसका सूप हुआ करती है,
अदिति होती है सूप फटकने वाली
और वायु होता है धान से
फोंतरे अलग करने वाला। ४।

अश्व इसके कण हैं,
गायें हैं चावल के दाने
और मच्छर हैं फोंतरे। ५।

घोंघे हैं इसके ऊपर के छिलके
बादल इसका चारा है। ६।

काला लोहा है इसका मांस और रुधिर है ताँबा। ७।

जस्ता है इसकी राख,
हरित है इसका रंग
और नीलकमल है गन्ध इसकी। ८।

खली है इसका बर्तन, गाड़ी के जुए इसके कन्धे होते हैं
हल के दोनों डंडे इसके कन्धे हैं। ९।

बैलों की लगामें आँतें है इसकी,
उनकी रस्सी है इसकी पायु। १०।

यह धरती
मिट्टी का बर्तन है
इसमें पकता है भात
आकाश ढक्कन होता है। ११।

हल की फाल पसलियाँ हैं इसकी,
मिट्टी है इसका मल। १२।

ऋत है इसके हाथ धोने का जल
नहरें धोवन हैं। १३।

ऋक् के मन्त्रों से
मिट्टी का यह बर्तन
आग पर चढाता है ऋत्विक्।
अथर्ववेद इसको घेरे हैं, साम इसे आगे ले जाता। १४-१५।

बृहत्[1] है इसे उलट पलट करने का डंडा, रथन्तर[2] है चम्मच। १६।

ऋतुएँ रसोइयनें हैं इसकी,
दिन और रात हैं समिधाएँ। १७।

पाँच मुँह वाले चरु को
उख को
पका रहा है घाम। १८।

इस भात को अर्पित कर
जो कर रहा है यज्ञ
सारे लोक
प्राप्त उसे होते हैं। १९।

---

१. सामवेद का पर्याय।

२. एक प्रकार की सामगीति

सागर, आकाश और धरती
ये तीनों के तीनों
टिकें हुए हैं,
एक के ऊपर एक। २०।

इसी भात की जूठन में
जन्म लेते हैं
छियासी देवता। २१।

मैं तुम से पूछता हूँ उसको ले कर
भात की महिमा जो है। २२।

जो जानता है इसकी महिमा।। २३।

वह यह नहीं कहेगा कि यह थोड़ा सा है,
कि इसके साथ तो है ही नहीं,
दूध, घी और दही;
कि यह तो कुछ भी नहीं है। २४।

दाता जितना देने का मन बनाये,
उसे अधिक न बतलाये। २५।

कहते हैं ब्रह्मज्ञानी
कि क्या तुमने खाया है भात
पीछे जाता हुआ
या कि सामने आता हुआ
तुमने खाया है भात ?। २६।

या कि भात ने तुमको खाया है ?। २७।

वे कहते हैं—
यदि तुमने खाया है पीछे जाता हुआ भात
तो प्राण तुम्हें छोड़ देगा। २८।

यदि तुमने खाया है सामने आता भात
तो अपान तुम्हें छोड़ देगा। २९।

न तो मैंने खाया है भात,
न भात ने मुझ को खाया है। ३०।

भात ने खाया है स्वयं
भात ही। ३१।

(११/३)

●

२६

साँस

हम नमन करते हैं साँस को
यह सब कुछ उसके ही वश में है
वह सब की स्वामिनी है साँस
उसके चलते
यह सब कुछ है बना प्रतिष्ठित। १।

साँस, तुम्हारी चीख को नमन,
साँस तुम जो करते हो गर्जन,
तुम्हें नमन
तुम्हारे भीतर जो बिजली है उसे नमन
तुम में जो वर्षा है उसे नमन। २।

वनस्पतियाँ गर्भवती हो जाती हैं
साँस जब गरजती है उनके आगे
उनके गर्भ से फूटते हैं फल
और वे होती जातीं है अनेक। ३।

जब ऋतु आती है
साँस गरजती है वनस्पतियों के आगे
जो कुछ है इस धरती पर वह सब
सराबोर हो जाता है सुख से। ४।

वर्षा होती है
और बरसती है साँस भी
इस विस्तृत धरती पर
तब प्रमुदित हो जाते हैं पशु
कि अब होगा उत्सव हम सबका। ५।

वर्षा में भीगे पौधे
कहते हैं साँस से

"तुमने बढा दिया है हम सबका जीवन,
तुमने हमें दी है सुगन्ध"। ६।

साँस तू जो आ रही है, तो हम नमन करते हैं तुझे,
तू जो निकल रही है, तो हम नमन करते हैं तुझे
तू जो ठहरी हुई है, तो हम नमन करते हैं तुझे
तू जो बैठी है, तो हम नमन करते हैं तुझे। ७।

साँस तू जो ले रही है साँस
तो हम नमन करते हैं तुझे
तू जो छोड़ रही है साँस
तो हम नमन करते हैं तुझे
तू जो निकल गई देह से बाहर
तो हम नमन करते हैं तुझे
तू जो लौट आई है देह के भीतर,
तो हम नमन करते हैं तुझे। ८।

साँस, यह काया है तेरी प्रिया
ये दोनों तेरी प्रेयसियाँ हैं प्राण और अपान
इन से निकला औषधरस
हमको दे दे
कि यह जीवनमयी रहे। ९।

साँस तू ने ही हमें पहना दिये है
जीवन के परिधान
जैसे पिता अपने प्यारे बेटे को
पहनाता है;
साँस उस सब की ईश्वर है
जो ले रहा है साँस
और जो नहीं ले रहा है साँस। १०।

मृत्यु है साँस
तक्मा* है साँस
देवता भजते हैं साँस को
सच कहने वाले को साँस

---

* तक्मा—एक प्रकार का ज्वर

करती है प्रतिष्ठित
उत्तम लोक में। ११।

विराट् है साँस
साँस ही दिखा रही है
साँस को भज रहा है हर कोई
सूर्य और चन्द्रमा है साँस
प्रजापति है साँस। १२।

साँस का आना साँस का निकलना
यह धान और जौ है जीवन का
जीवन की गाड़ी का बैल है साँस
प्राण है जौ
अपान है धान। १३।

माँ के गर्भ में मनुष्य
भरता है साँस
और छोड़ता है साँस
साँस जब तू
करती है प्रसन्न
तब वह लेता है जन्म। १४।

साँस को ही कहते हैं वे पवन
साँस है हवा
जो बीत चुका
वह भी समाया है साँसों में
जो होने को है वह भी साँसों पर
रचा हुआ है। १५।

चाहे रोपा हो उन्हें अथर्वा ने, अंगिरा ने
या रोपा हो देवों ने
या रोपा हो मनुजों ने
जड़ी बूटियाँ उगती हैं तभी
ओ साँस तू गति लेती है। १६।

जब साँस बरसती है धरती पर
वर्षा बन कर

तभी जड़ी बूटियों ये उगती है और लताएँ ये सारी बढ़ती हैं। १७।

साँस जिसने तुझे समझ लिया है
जिसके भीतर
तू हो गई प्रतिष्ठित
उसे सबसे उत्तम लोक में
करते हैं बलि का उपहार समर्पित। १८।

ओ सुनने वाली साँस!
ये सारी की सारी प्रजाएँ
तुझ पर पूजा का उपहार चढ़ाएँ
उन्हें तू दे उपहार
जो जो सुनते हैं तेरे स्वर। १९।

देवताओं के गर्भ में रह कर
डोलती है वह
कण कण के भीतर
बोलती है वह
हर किसी में वह थी और फिर होगी
वह अतीत, भविष्य और वर्तमान है
वह समाई है सब के भीतर
जैसे पिता
समाया होता है
बेटे के भीतर। २०।

सागर से उठता हुआ हंस
एक पाँव अपना रहने देता है
सागर में ही;
यदि वह उठा ले अपना वह एक पाँव
तो नहीं होगा कल,
नहीं होगी रात, नहीं होगा दिन
नहीं होगा प्रभात, नहीं रहेगा समय
किसी भी समय में। २१।

यह आठ पहियों की गाड़ी है
धुरी तो एक ही है इसकी

सहस्रों है इसके अरे
यह आगे है यह पीछे है
अपने आधे से ही रच दिया है इसने सकल भुवन
जो बचा रहा शेष आधा
उसका कहीं कोई चिह्न नहीं है। २२।

विश्व में जो कुछ जन्मा है
उसकी साँस स्वामिनी तू है
विश्व में जो कुछ हिल रहा है
उसकी साँस स्वामिनी तू है
जो शेष बचे हैं
उन पर धनुष तू ने अपना तान दिया है
साँस तुझे नमन करते हैं हम। २३।

यह सब कुछ जो कुछ जन्मा है
उसकी साँस स्वामिनी तू है
यह सब कुछ जो कुछ हिल रहा है
उसकी साँस स्वामिनी तू है
कभी न झपकी लेने वाली
मन्त्रों से जागी जागी रहने वाली
हे धीर साँस तुझे नमन करते हैं हम। २४।

जो सो रहे हैं उनके भीतर
जागती है वह एक ऊपर रह कर
वह कभी लेटती नहीं है
कभी किसी ने सुना नहीं
कि सो गई हो
सोये हुओं की भी साँस। २५।

हे साँस, मुझ से पराङ्मुख मत होना
तू वही रहो जो मैं हूँ
जैसे पानी में रहता है जीवन
ऐसे ही मुझ में जी रही है तू
मैं तुझे बाँधे हुए हूँ अपने से। २६।

(११/४)

●

२७

ब्रह्मचर्य

धरती और आकाश दोनों के बीच
चल रहा है
ब्रह्मचारी
देवता अपने मन जोड़ रहे हैं उससे
वही चला रहा है
धरती और आकाश दोनों को;
अपने तप से
वह तर्पित कर रहा है अपने आचार्य को। १।

माता-पिता,
तैंतीस देवगण, और
तीन सौ देवता
चलते हैं उसके पीछे पीछे
और छः हजार
गन्धर्व चलते हैं उसके पीछे
अपने तप से वह इन सब का पालन करता है। २।

आचार्य उसका उपनयन करता हुआ
धारण करता है अपने गर्भ में
ब्रह्मचारी को
उसे तीन रात तक रखता है उदर में अपने
नया जन्म पाता है ब्रह्मचारी
और देवता
उसे देखने आते हैं। ३।

यह धस्ती उसकी पहली समिधा है,
दूसरी समिधा है आकाश
इन समिधाओं से

अन्तरिक्ष को पूर रहा है ब्रह्मचारी
अपनी मेखला से अपने श्रम से और तप से
ब्रह्मचारी निखिल विश्व को पाल रहा है। ४।

वह बन जाता है अग्रजन्मा
धर्म को धारण कर
तप से ऊपर उठ कर
उसी से जन्म लेता है ब्राह्मण
उसी से जन्म लेता है ज्येष्ठ ब्रह्म
और देवता सारे के सारे
और अमृत भी। ५।

आ रहा है दीक्षित हुआ ब्रह्मचारी
समिधा से दीप्त
कृष्ण मृग की खाल पहने
बढ़ी हुई हैं मूँछ उसकी
वह पूर्व सागर से उत्तर सागर तक पहुँचता है तत्क्षण
सकल विश्व को समो कर अपने भीतर
फिर देता है उसे नया आकार। ६।

वह जन्म देता है ब्रह्म को, जल को विश्व को
परमेष्ठी प्रजापति को विराट् को
अमृत की योनि में गर्भ बन कर
वही असुरों को करता है उच्छिन्न
इन्द्र बन कर। ७।

आचार्य तराश देता है धरती और आकाश
यह धरती और यह आकाश
वह बना देता है इन्हें विस्तीर्ण और गहरे
अपने तप से फिर इन्हें बचाता है ब्रह्मचारी
उसमें देवता
हो जाते हैं एक मन वाले। ८।

इस विस्तृत धरती को
सबसे पहले भिक्षा में माँग लेता है ब्रह्मचारी

और फिर इस नभ को
फिर इन दोनों की समिधा बना कर
तर्पित करता है वह
सकल विश्व को। ९।

एक निकट है एक दूर है
आकाश की पीठ पर
गुहा में दोनों निधियाँ छिपी हुई है ज्ञानी की
अपने तप से बचाता है ब्रह्मचारी दोनों को
वह जानता है
और ब्रह्म को रचता है। १०।

एक निकट है एक दूर है
धरती और आकाश के बीच
दो अग्नियाँ मिल रही हैं
उनसे प्रकाश की किरणें
फूट रही हैं
उन्हें समोये अपने भीतर
प्रतिष्ठित है ब्रह्मचारी। ११।

गरज गरज कर करता है क्रन्दन
रोक रोक लेता है
विशाल लिंग फैला कर
पहुँचता है धरती के निकट
ब्रह्मचारी पहाड़ के ऊपर से सींचता है वीर्य
इस धरती पर
जिससे जी उठती हैं चारों दिशाएँ इस धरती पर। १२।

अग्नि में, सूर्य में, चन्द्रमा में, पवन में, और जल में
ब्रह्मचारी समिधा देता है
उनसे फूटती आभाएँ छा जाती हैं व्योम में
उनसे होता है घृत, वर्षा, सन्तति और जल। १३।

आचार्य ही मृत्यु था उसके लिये,
आचार्य ही था वरुण, सोम, औषधि और पयस्

गरजते मेघ थे, सैनिक थे उनके सब गुण
जिनसे सम्भृत था आकाश। १४।

वरुण बनता है उसका आचार्य
घृत से सम्भृत कर देता है आचार्य उसे
और प्रजापति से वह जो कुछ इच्छा करता है
ब्रह्मचारी पूरी करता है उसके लिये
और अपनी आत्मा का बन जाता है प्यारा। १५।

आचार्य बन जाता है ब्रह्मचारी
प्रजापति बन जाता है ब्रह्मचारी
विराट् होता है वह बन कर प्रजापति
विराट् हो कर वही होता है इन्द्र। १६।

ब्रह्मचर्य से और तपस् से
राष्ट्र की रक्षा करता है राजा।
ब्रह्मचर्य के द्वारा ही
आस लगाता है कोई आचार्य
किसी ब्रह्मचारी की।
कोई कन्या पा जाती है
एक युवा वर
ब्रह्मचर्य से;
गाड़ी में जुतने वाला बैल और घोड़ा भी
अपना चारा पाते हैं,
ब्रह्मचर्य से। १७-१८।

ब्रह्मचर्य से और तपस् से
मृत्यु को मार दिया देवों ने
इन्द्र देवों के हित
रचता है भरा पूरा स्वर्ग
ब्रह्मचर्य से। १९।

जड़ी बूटियाँ, भूत, भविष्य, दिन और रात तथा फसल और पौधे भी
संवत्सर भी और ऋतुएँ भी

ब्रह्मचारी ही है
ये सब के सब। २०।

इस धरती पर रहने वाले
या नभ में विचरण करने वाले
पशु-पक्षी चाहें वे हों अरण्य के
या वे हों गाँवों के
चाहे वे हों पंखों वाले
चाहे वे हों बिना पंखों के
ब्रह्मचारी ही हैं
ये सब के सब। २१।

प्रजापति की सारी सन्तानें
धारण करती हैं प्राण
अपनी अपनी काया में
उनकी सबकी रक्षा करता है ज्ञान
जिसे धारण करता है ब्रह्मचारी। २२।

यह देवों का सार तत्त्व है पावन
अनछुआ प्रकाशित
उसी से जन्म लेता है ब्रह्मज्ञानी
और ज्येष्ठ ब्रह्म
और अमृत से संग देव भी सारे। २३।

ब्रह्मज्ञान के प्रकाश से आलोकित है वह
ब्रह्मचारी
उसमें निवास करते हैं देवगण सारे
प्राण, अपान, व्यान, वाणी, मन हृदय, ब्रह्म और मेधा
सब कुछ अनुस्यूत हैं उसमें ही। २४।

ब्रह्मचारी
हमें नेत्र दो
कि हम देख सके
हमें कान दो
कि हम सुन सकें

कि हमारी काया के लिये दो अन्न
और वीर्य
रक्त और उदर भी। २५।

इन सब को अपने अधीन कर
पानी के तल पर सागर में रह कर
जब वह करता है तप
फिर जब वह आता है स्नान कर के
जल के बाहर
तो अपनी पिंगल आभा से
आलोकित होता है धरती पर। २६।

(११/५)

●

२८

उच्छिष्ट ब्रह्म

जो बचा रह गया उसी में हैं नाम और रूप
उसी में समाया है लोक
उसी बचे रहे में इन्द्र भी है, अग्नि भी
उसी में समाया सारा संसार। १।

बचे रहे में धरती और आकाश
और समाया हुआ है सारा विश्व,
पानी, सागर, चन्द्रमा और पवन
ये सब उसी बचे रहे के भीतर। २।

सत् और असत् दोनों, मृत्यु और ऊर्जा और प्रजापति भी
इस लोक का सब कुछ
उस पर टिका हुआ है
व्र भी, द्र भी और मेरे भीतर की लक्ष्मी भी।*। ३।

(११/७)

●

* 27 मन्त्रों में से प्रथम तीन मन्त्र

२९

धरती

इस धरती को धारे रहते हैं सत्य महान् ऋत निष्ठामय,
दीक्षा, तप, ज्ञान, यज्ञ
भूत, भविष्यत् की साधक यह महिमाय धरती,
एक बड़ा संसार
हम सब के हित रच दे। १।

कितनी निर्बाध है धरती की गोद
ऊँची, नीची और समतल
कितनी औषधियाँ तरह तरह के प्रभाव वाली
यह करती है धारण,
यह धरती इसी तरह रहे फैली फैली,
करती रहे समृद्ध हमें। २।

जिस पर हैं सागर, नदियाँ जल से भरे लबालब
जिस पर उगता है अन्न, होती है खेती,
जिस पर यह सब गतिमय होता है,
लेता है साँस, चला करता है
वह धरती अपना पहला पहला पेय हमें दे। ३।

जिस पर हैं हहराते सागर,
जिस पर हैं लहराती नदियाँ,
जिस पर उगता अन्न और होती है खेती,
जिस पर जीवन लेता है साँस,
हिलता है,
वह धरती अपना पहला पहला पेय हमें दे। ४।

जिस पर पहले पुरखे कर गये पराक्रम
जिस पर देवों ने असुरों को ध्वस्त किया,
जिस पर रहती गायें, जिस पर घोड़ों का डेरा

पक्षी जिस पर करें बसेरा,
वह धरती सौभाग्य और तेज से हम को भर दे।५।

सकल विश्व का पोषण करने वाली
सबको समृद्धिमय करने वाली,
स्थिर है यह, स्वर्णिम वक्षःस्थल वाली
जो कुछ घूम रहा है उसको यह धारे है
वैश्वानर अग्नि सँजोये अपने भीतर,
इन्द्र ऋषभ सा विचरण करता जिस पर,
वह द्रविण में हमें करे प्रतिष्ठित।६।

सदा जाग कर रक्षा करते
देवता अप्रमाद जिस विशाल धरती की,
वह दोहन कर दे मधु
हम सब के हित
और सींच दे हमें तेज से।७।

जो पहले कभी हुआ करती थी
बस सागर में भरा हुआ जल
जिसको अपनी माया से उबार कर
ले आये ऊपर मनीषीजन
सत्य से आवृत जिसका हृदय अमृतमय
परम व्योम में है स्थापित,
वह धरती हमारे उत्तम राष्ट्र में तेज और बल
आहित कर दे।८।

जिसके कण कण को करता है आप्लावित
दिन और रात जागता जल
बहता हुआ निरन्तर,
कितनी कितनी धाराएँ झरती रहती हैं जिस पर,
वह धरती दूध बहा दे हम सबके हित
और सींच दे हमें तेज से।९।

जिसको नापा अश्विद्वय ने,
जिस पर चरण विष्णु ने धारे,

और शची के स्वामी देव इन्द्र ने जिसको
शून्य शत्रुओं से कर डाला,
वह धरती हम सब के हित करे दूध की वर्षा
जैसे माँ अपने बेटे के हित करती है। १०।

हे धरती माँ ये पहाड़ियाँ और हिम से मंडित पर्वत ये सारे
बड़े बड़े ये जंगल और तुम्हारे
सुखकर ये सब बनें हमारे,
यह भूरी, काली, लाल, अनगिनित छटाओं वाली,
अटल है यह धरती विशाल,
इन्द्र सदा इसकी करता है रखवाली,
इस धरती पर
अविजित, अक्षत और सुरक्षित
मैं रहूँ सर्वदा सदा प्रतिष्ठित। ११।

हे धरती माँ, जो तुम्हारा मध्यभाग है,
जो तुम्हारा नाभिभाग है,
और तुम्हारी काया से
फूट रही हैं जो ऊर्जाएँ,
उस मध्यभाग पर, उस नाभिभाग पर
हम सब को तुम करो प्रतिष्ठित,
अपनी काया से उन ऊर्जाओं को
करो प्रवाहित;
यह धरती है मेरी माता,
मैं हूँ बेटा इस धरती का। १२।

इस धरती पर हम सब रचते हैं वेदी,
इस धरती पर हम सब
यज्ञ किया करते हैं,
करते हुए अनगिनत कर्मों का विस्तार,
इस धरती पर, और उठाते हैं हम ऊपर
यज्ञ के चमकीले खम्भे,
आहुति अर्पित करने के पहले,
बढ रही है यह धरती,
यह हमें बढ़ाए। १३।

हे धरती माँ, जो हम से करता है ईर्ष्या,
जो हम से लड़ रहा अकारण,
धारदार हथियार लिये जो कोई
हम को दबा रहा है अन्यायी,
उसे हमारे कारण,
रौंद डालो हे तत्पर रहने वाली!। १४।

तुझ से ही जन्मे हम सब मृत्युलोक के प्राणी,
तुझ पर विचरण करते हैं दोपाये या चौपाये,
हम पाँच कुटुम्बों* के मानव हैं सब तेरी ही सन्तानें,
हम सब मर्त्यों के हित ज्योति अमृतमय
अपनी किरणों से फैलाया करता है
उगता सूरज। १५।

ये सारी की सारी प्रजाएँ हमारी,
दोहन करें मिल कर
धरती के फल,
हे धरती माँ, वाणी का मधु
मुझ को दे दे। १६।

जननी है यह सकल जगत् की,
जननी है यह जड़ी बूटियों की,
अटल है यह धरा,
धर्म से धारी हुई धरा,
यह मंगलमयी है, यह सुखकर है,
हम सदा करें विचरण इस पर
बन कर अनुचर। १७।

कितनी बड़ी है तू धरती माँ,
देख बनती गई है तू कितना बड़ा घर,
कितनी गहरी
तेरी हलचल,
कैसी कैसी गति,

---

* टिप्पणी द्रष्टव्य

कैसा कम्पन
तेरे ऊपर,
महान् इन्द्र देवता सदा जगता
करती है तेरी रखवाली,
हे धरती मुझे प्रकाशित कर दे,
सोने की तरह,
कि मुझ से द्वेष नहीं करे कोई। १८।

जल रही है अग्नि निरन्तर
धरती के भीतर,
अग्नि है पौधों के भीतर,
अग्नि है जल के भीतर,
अग्नि समोये है पत्थर पत्थर,
अग्नि दहक रही है पुरुषों के भीतर,
अग्नियाँ जल रही हैं गायों और अश्वों के भीतर। १९।

आकाश से आ कर कर
अपनी तपन जगाता है अग्नि
इस धरती के भीतर,
विस्तृत अन्तरिक्ष है अग्नि का घर,
हवि को ले जाने वाली और घृतप्रिय,
अग्नि को दहकाते हैं,
हम मर्त्यलोक के मानव। २०।

अग्नि का निवास है धरती यह
यह मुझको अग्नि जैसा ही चमकीला और सबल कर दे। २१।

इसी धरती पर रह कर
हम अपनी सब कुछ परिपूर्ण बना कर
करते हैं देवों को अर्पित;
इस धरती पर
जीवित रहते हैं हम मानव
अन्न जल ले ले कर,

यह धरती दे मुझ में साँसों का स्पन्दन भर दे,
यह धरती मुझ को जीवन दे,
बूढा होने तक
लम्बा जीवन मुझ को दे। २२।

हे धरती माँ, तुझ में गन्ध रमी है,
उसको ही धारण करते हैं पौधे,
उसको धारे रहता है जल,
उसका सेवन करते हैं गन्धर्व
अप्सराएँ भी,
हे धरती अपनी उसी गन्ध से मुझ को कर दे सुरभित,
कि कोई मुझ से करे न द्वेष। २३।

हे धरती तेरी जो सुगन्ध वह
समा गई थी नील कमल में
जिसे देवगण ले आये थे
सूर्या के विवाह में,
हे धरती, तेरी पहली पहली सुगन्ध वह है
अपनी उस सुगन्ध से मुझ को सुरभित कर दे,
कि कोई मुझ से करे न द्वेष। २४।

तेरी जो सौभाग्यमयी चमकीली गन्ध
रमी हुई है मनुष्यों में
स्त्रियों में, पुरुषों में,
अश्वों में, वीरों में, मृगों और हाथियों में
तेरा जो वर्चस् रहता है एक कन्या के भीतर
हे धरती अपनी उसी गन्ध में उस वर्चस् में एकमेक कर ले
हम सब को
कि कोई मुझ से करे न द्वेष। २५।

चट्टान है यह धरती,
पत्थर है यह धरती
मिट्टी है यह धरती,
हम सब के द्वारा

धारी गई है यह धरती,
सोने के वक्षःस्थल वाली इस धरती को
मैंने किया नमन। २६।

जिसके ऊपर
वृक्ष और वनस्पतियाँ,
खड़े रहते हैं अटल निरन्तर,
सकल विश्व को धारे रहने वाली
और धारी गई हम सब से,
इस धरती को हम करते हैं सम्बोधित
निर्मल अपनी वाणी से। २७।

जब हम खड़े हों,
जब हम बैठे,
जब हम हों स्थिर,
या जब हम चलते हों,
तो अपने दाहिने पाँव से
या अपने बायें पाँव से
कहीं हम लड़खड़ा न जाएँ
इस धरती पर। २८।

मैं सम्बोधित करता हूँ
इस पावन धरती को,
इस क्षमामयी धरा को मैं करता हूँ सम्बोधित,
ब्रह्मज्ञान से बढती इस धरती को
मैं करता हूँ सम्बोधित।
ऊर्जामय, पुष्ट अन्न का भाग और घृत
जो तू ने सँभाल कर रखा है,
उसके लिये बैठते हैं हम
अंक में तेरे। २९।

पावन जल देह हमारे
करदे निर्मल
जो कुछ था मल
उसको हम ने फैंक दिया है उस पर

जो अप्रिय था,
इस पृथ्वी के पावन रज से मैं अपने को
करता हूँ पावन। ३०।

हे धरती माँ, जो कुछ है तेरी पूर्व दिशा में,
जो कुछ तेरे उत्तर में है,
जो कुछ है तेरे नीचे,
जो कुछ है तेरे पीछे,
वह सब मेरे को हो सुखकर
जब जब में चरण रखूँ तुझ पर,
मैं टिका हुआ हूँ तेरी इसी सृष्टि पर इस तरह
कि गिर न सकूँ मैं कभी। ३१।

हमें कभी धकेल मत देना धरती माँ,
पीछे से या आगे से, ऊपर से या नीचे से,
स्वस्तिमयी तुम रहना सदा हम सब को,
दूर सदा करती ही रहना हम से मार्गों के अवरोधों को,
दूर रखना हम से और मृत्यु को। ३२।

हे धरती माँ, तेजस्वी सूरज की आभा में,
जितना जितना मैं तक पाता हूँ तुझ को,
वहाँ तक विफल न हो मेरी आँखें,
इस समय भी, आने वाले समय में भी। ३३।

हे धरती माँ, हम लेटते हैं तुझ पर
दाहिनी करवट या बायीं करवट,
या उत्तान सो जाते हैं तुझ पर,
अपनी पसलियाँ टिकाते हैं तुझ पर
उस समय कभी भी चोट हमें मत पहुँचाना,
ओ धरती, तुम जो हम सब के लिये सेज हो। ३४।

धरती माँ, मैं तुझ पर जो कुछ बोऊँ,
वह झट से उग जाए,
चोट न पहुँचा दूँ कभी किन्तु मैं
तेरे प्राणों पर
और हृदय पर। ३५।

हे धरती माँ, तुझ पर आता रहे ग्रीष्म,
तुझ पर आती रहे वर्षा,
तुझ पर आती रहे शरद्,
फिर शिशिर
और फिर वसन्त,
आती रहे ये ऋतुएँ हर वर्ष,
साथ इनके
दिन और रात
करते रहें हमारे ऊपर
मधु की वर्षा। ३६।

सर्राते हुए साँप को दूर हटाती,
पावन यह धरती,
इस पर जल रही है अग्नियाँ वे ही,
जो थीं पानी के भीतर,
देवों का अपमान करते दस्युओं को दूर भगाती,
यह धरती वरण करती है इन्द्र का,
वृत्र का नहीं;
यह धारे है अपने को।
यह बलशाली शक्र के लिये। ३७।

जिस पर वेदी की रचना होती आई,
जिस पर आहुति हम देते आये,
जिस पर यज्ञों के खम्भे हमने ऊँचाये
ज्ञानी जन जिस पर यजन ऋचाओं से करते आये
सामगायन से, यजुष् जानने वाले,
जिस पर जुटते आये हैं ऋत्विक् जन,
सोम का पान कराने के लिये इन्द्र को। ३८।

जिस पर अतीत को रचने वाले ऋषियों ने
गान किया पहले अपनी वाणी से,
सात विधाताओं ने सत्र किये
यज्ञ और तप के संग। ३९।

वह धरती हमें करे प्रदान वह
सारा धन जो हमने है चाहा,
सौभाग्य का देव
चले साथ साथ हमारे
आगे आगे चले इन्द्र भी। ४०।

जिस स्थिर धरती पर
गाते और नाचा करते हैं,
ऊँचे स्वर में आलाप उठा कर,
जिस पर हमने युद्ध किये, जिस पर हम चीखे चिल्लाये,
जिस पर दुन्दुभि का नाद हुआ,
वह भूमि हमारे शत्रुजनों का उच्छेद करे,
वह अप्रतिद्वन्द्वी हम को कर दे। ४१।

जिस पर उगता है अन्न, धान, जो
जिस पर पाँव कुटुम्बों* के हम मानव उनके संग बढे,
पर्जन्य की पत्नी इस धरा को
वर्षा में हो रही प्रफुल्लित इस धरती को
हम करते हैं नमन। ४२।

जिस पर देवों के निर्मित नगर बसाये,
जिसके खेतों को हमने सींचा श्रम से,
वही यह विश्वगर्भा धरा है,
प्रजापति इसके कण कण को
रमणीय कर दे हम सब के लिये। ४३।

जो धारण करती है अनमोल खजाने छिपे हुए भीतर ही भीतर,
वह धरती धन, मणि और कांचन मुझ को दे दे,
वसुदायी है यह वसुन्धरा आनन्दमयी,
वसुओं में सुप्रसन्न मन से यह हमें प्रतिष्ठित कर दे। ४४।

जो भिन्न भिन्न भाषाओं वाले
भिन्न भिन्न धर्मों वाले

---

* टिप्पणी द्रष्टव्य

धारे रहती है कई कई जन,
कई तरह से,
जैसे एक घर में कुटुम्ब रहता हो,
स्थिर गैया सी जो कभी न बिदका करती है,
वह धरती धन की सहस्र धाराएँ हमें दुहा दे। ४५।

हे धरती तेरे भीतर जो
सर्प और तीखे डंकों वाले बिच्छू बसे हुए हैं,
जो घबराये बिल में छिप जाते हैं हेमन्तों में
हे धरती तुझ पर जो रेंग रहे हैं कीड़े, जीव-जन्तु वर्षा में,
वे हम पर न करें आक्रमण,
जो कुछ मंगलमय है उससे
तू हम को आप्लावित कर दे। ४६।

कितने कितनी राहें तुझ पर खुली हुई हैं,
जिस पर आते जाते हैं जन,
कितने मार्ग बने हैं तुझ पर
जिनसे आते जाते हैं रथ,
जिन पर चलते हैं पुण्यात्मा भी पापी भी,
हम जीत सकें इन सब राहों को,
दूर हटाते तस्करजन को,
जो कुछ मंगलमय है उससे
तू हम को आप्लावित कर दे। ४७।

जो धारे रहती है हल्के को भी भारी को भी,
जो शव ढोती है पुण्यात्मा के भी पापी के भी,
वह साथ रहती है वराह को भी धारण करती है शूकर को भी। ४८।

ये जो हैं अरण्य के पशु और हिंसक जन्तु
वन में रहने वाले सिंह, व्याघ्र और नर भक्षी
सियार, भेड़िये, और रीछ सब
हे धरती इन सबको और राक्षसों को हम से रखना दूर। ४९।

ये सब जो हैं गन्धर्व और अप्सराएँ,
ये जो कोई हैं अराय और किमिंदी जन

ये जो पिशाच हैं, राक्षस हैं,
हे धरती माँ, इन सब को हम से रखना दूर।५०।

जिस धरती पर उड़ते हैं दो पाँवों वाले पक्षी,
हंस, गरुड, बाज और पखेरू तरह तरह के,
जिस पर बहता है पवन, धूल के मेघ बनाता
पेड़ ढहाता,
पवन के बहने के संग
भड़कती है लपलपाती ज्वालाओं वाली अग्नि।५१।

जिस धरती पर जुड़े हुए हैं सदा परस्पर,
काली रात और अरुणवर्ण का दिन,
वर्षा से सराबोर रहने वाली यह धरती,
वह प्रिय घर घर में मंगल रच रच कर
वह हमें करे प्रतिष्ठित।५२।

आकाश, धरती और अन्तरिक्ष ने
दिया है मुझे यह विस्तार,
अग्नि, सूर्य, जल और सकल देवों ने
दी मुझे मेघा।५३।

इस धरती पर
मैं सब कुछ सहने वाला,
फिर भी सबसे ऊपर रहने वाला,
सबको अपने वश में करने वाला
सकल विश्व पर शासन करने वाला,
दिशा दिशा पर जय करने वाला।५४।

धरती
तू बढ़ती रही है आगे आगे
देवों ने तुझ से कहा कि बढ़,
और बड़ी होती रही है तू,
फिर अपने भीतर ही भीतर बनी प्रतिष्ठित,
रची तू ने चार दिशाएँ।५५।

हे धरती
तुझ पर बसे हुए हैं गाँव,

उगे हैं अरण्य,
तुझ पर होती रही हैं सभाएँ,
हुए हैं संग्राम
जुटी हैं समितियाँ,
जिनमें हम कहते रहे हैं वह
तुझे जो अच्छा लगे।५६।

जैसे अश्व झटक देता है धूल
जब से यह जन्मी है तब से
झटक कर दूर
करती रही है यह धरती
उन लोगों को जिन्होंने क्षीण किया है इसको;
प्रसन्न, आगे बढने वाली, सकल भवन की
रक्षा करने वाली,
वनस्पतियों और पौधों का वर्धन करने वाली।५७।

मैं जो कहता हूँ, कहता हूँ मधुमय,
मैं जिसे देखता हूँ वह
हो जाता है मेरा,
मैं हूँ तेजोमय,
स्फूर्ति से भरा हुआ रहता हूँ,
जो हिंसक हैं
मैं उनको समाप्त करता हूँ।५८।

यह शान्तिमयी, सुरभित, सुखकर,
माँ की तरह
दूध भरा हो जिसके वक्षःस्थल में,
यह भूमि मुझे दे आशीष,
संग अपने पय के।५९।

जिसको हवि के संग विश्वकर्मा ने
खोजा सागर के भीतर
जहाँ यह पंक में डूब गई थी,
वह प्रकट हुई
उस पात्र की तरह

जो रखा हो किसी गुहा में,
और प्रकट हो उन लोगों को भोग लगाने को
जिनके पास हुआ करती है माँ। ६०।

हे धरती माँ तू जन जन की आवपनी है,
तू सकल कामना पूरी करने वाली अदिति है,
तू लेती विस्तार,
अधूरा जो कुछ तुझ में छूट गया है,
प्रजापति उसको पूरा कर देगा,
जो ऋतु की पहली सन्तति है। ६१।

हे धरती तेरे ऊपर के वे सब स्थल
हों हम सब के हित रोगरहित, यक्ष्मारहित
बन कर लें जन्म हमारे कारण,
हम सब जाग्रत जन
पा कर लम्बा जीवन
बनें तेरी पूजा
करने वाले
करें तुझ को उपहार अर्पण। ६२।

हे धरती माँ, मुझे धारे रहना
मंगल के भीतर किये प्रतिष्ठित,
स्वर्ग से करती रहना संवाद,
हे ऋषि धरती,
करना मुझ को श्रीमय विभूतिमय।

(१२/१)

●

३०

सूर्या का विवाह

सत्य सँभाले हुए है इस धरती को
सूर्य सँभाले हुए है इस धरती को
ऋतु से टिके रहते हैं आदित्य
और आकाश में टिके रहते हैं सोम। १।

सोम से ही बलवान् रहते हैं आदित्य,
सोम से ही धरती रहती है महीयसी
तप करते हैं नक्षत्र
और अंक में उनके
रहता है सोम। २।

सोम को पीने वाला
समझता है कि वह पी रहा है
सोम की पीसी हुई बूटी
पर जिस सोम को जानते हैं ब्रह्मज्ञानी
इस धरती पर रहने वाले
उसे नहीं ले पाते हैं। ३।

सोम, जैसे ही वे पीते हैं तुम्हें
तुम और आप्लावित हो जाते हो
वायु सोम का रक्षक है,
जैसे वर्षों के आकार
महीने होते हैं। ४।

सोम, तुम्हें ढकने की सब सामग्री है
उसमें सुरक्षित हो तुम
रक्षक हैं तुम पर निगरानी को
पीसने के पत्थरों के स्वर
सुनते हुए तुम बने हुए हो रक्षित

इस धरती पर रहने वाले
तुम्हें नहीं ले पाते हैं।५।

मन के संकल्प का तकिया लगाये
प्रेम का अंजन आँजे
धरती और आकाश
का मार्ग नापती
सूर्या चली है पति से मिलने।६।

रैभी का गायन ही गीत विदा का है उसका,
नाराशंसी का गायन ही
गीत है उसके स्वागत का;
गाथाओं के वस्त्रों में कितनी सजी धजी वह
आ रही है सूर्या
पति से मिलने।७।

स्तोत्र बन गये हैं उसके प्रतिधि
छन्द हो गये ओढनी उसकी
और जूड़ा भी;
अश्विनीकुमारों ने पहले उसे वरा
अग्नि बना उसका अग्रगामी।८।

सोम हो गया था वधू का खोजिया,
अश्विनीकुमार हो गये थे वर
तब सविता ने दे दिया सूर्या को
अपने पति के लिये
जिसे चाहा था उसने मन से।९।

उसका मन बन गया था वाहन
वाहन के ऊपर की छाजन
बन गया था आकाश
चमकते तारे
बन गये थे उसकी गाड़ी के बैल
जब कि सूर्या चली
पति से मिलने।१०।

ऋचाओं ने उनसे कहा–चलो
साम के गीत ने उनसे कहा चली
तब साम के गीत की तरह
चल पड़े बैल
सूर्या के दोनों कान
बन गये उसकी गाड़ी के दोनों पहिये
सारा आकाश
बन गया उसका मार्ग चराचर। ११।

कितने पावन थे तुम्हारे गाड़ी के दोनों वे पहिये
उनकी धुरी में बँधे थे
सूर्या, तुम्हारे प्राण
मन की गाड़ी पर
चढ़ी सूर्या और चल पड़ी
पति से मिलने। १२।

उसके सारे उपहार
भेजे जा चुके पहले ही
जिनको सिरजा था सविता ने।
माघ में छीजती हैं सूरज की किरणें
और फाल्गुन में होते हैं विवाह। १३।

ओ अश्विनीकुमारो, तीन चकों वाले रथ पर बैठे
जब तुम आये
पूछने कि कहाँ हैं सूर्या के उपहार
तब कहाँ था तुम्हारे रथ का चौथा पहिया ?। १४।

कहाँ अटके रह गये थे तुम,
ओ शुभ देवो, जब तुम दोनों
आये थे सूर्या का वरण करने
सारे देवों ने अनुमति दी तुम्हें इसके लिये
पिता का वरण किया पुत्र ने। १५।

ओ सूर्या, तेरे रथ के दो पहियों को
जानते हैं ब्राह्मण

ऋतुओं के आने जाने के संग,
पर एक चक्र जो छिपा हुआ है
किसी गुहा में उसको तो
बूझा करते हैं केवल ज्ञानी ही। १६।

हम अपने सुबन्धु अर्यमा का करें यजन
जो वर को खोज दिया करता है,
जैसे खीरे का फल छूटता है बन्धन से
ऐसे ही मैं
मुक्त करता हूँ उसे यहाँ से
पर वहाँ से नहीं
मैं बोधता हूँ उसे नये बन्धन में वहाँ,
कि हे उदार इन्द्र, जिससे वह
बने प्रजावती सौभाग्यवती। १७-१८।

मैं तुझे मुक्त करता हूँ वरुण के पाश से
जिससे तुझको बाँधा था शुभ सविता ने
उस पुण्य के लोक में
जो ऋतु का मूल है
सुखमय हो तेरा जीवन
अपने पति के संग। १९।

सौभाग्य का देवता
तुझे यहाँ से ले जाये
हाथ पकड़ कर
अश्विनी कुमार तुझे पहुँचायें
रथ पर बिठा कर
तू गृहस्थिन बन कर
जा उस घर में
जहाँ सब को अपने वश में रख कर
तू उनके समाज में
अपनी बात कह सके। २०।

अपनी सन्तानों के संग
भरा पूरा तेरा जीवन हो,

सदा बनी रहे तू जाग्रत
अपने उस घर में,
सँभाले रखने को गृहस्थी का साम्राज्य
तू एकमेक हो जा अपने पति से
कि आगे भी
समाज में
अपनी बात कह सके। २१।

बने रहो तुम दोनों इस दुनिया में
तुम दोनों अलग कभी मत होओ
पूरा का पूरा जीवन
पाओ तुम दोनों,
खेलते हुए अपने बेटों और नातियों के साथ
आनन्दभरे
स्वस्तिमय। २२।

जैसे सूरज और चन्द्रमा
खेलते हैं पूरब और पश्चिम में
दो बच्चों की तरह,
और जाते हैं सागर तक
एक तो देखभाल करता है सकल भुवन की
दूसरा लाता है ऋतुओं को और होता जाता है
नया नया। २३।

तुम जन्म लेते हो बार बार
और होते जाते हो नये ओर नये
दिवस की पताका फहराते
उषा के आगे आगे जाते
आते आते
तुम देवों को अर्पित करते हो उनका भाग
हे चन्द्र,
लम्बा करते हुए
हमारे जीवन का अन्तराल। २४।

सारे शामुल्य* दे कर
ज्ञानियों में धन वितरित कर
चलती फिरती जादू* की मूरत बन कर
वह जा रही है पति के पास
नव परिणीता। २५।

हो जाता है नीललोहित,
जैसे जादू*
डालता है प्रभाव
हुमस पड़ते है नवपरिणीता के सगे सम्बन्धी
पति बँधता जाता है
बन्धन में उसके। २६।

कैसी अश्लील हो जाती है
काया उसकी
चमकती हुई पाप में
जब पति नवपरिणीता के वस्त्रों में
अर्पित करता है अपने अंग। २७।

उमेठ लेती है भीतर भीतर
टूटती है
टुकड़े टुकड़े बिखरने को होती है
देख देख सूर्या के कितने रूप
ज्ञानी ही उसको दे सकता है छुटकारा
इस सारी पीडा से।*। २८।

कितनी तीखी, कितनी कटु
काँटों से भरी विषमय पीड़ा है यह
सूर्या की यह पीडा
समझ सके जो ज्ञानी
वह ले जाये
उसका यह वस्त्र।*। २९।

मंगलमय और सुखकर है यह वस्त्र
और ले जायेगा इसको ज्ञानी

---

* टिप्पणी द्रष्टव्य

वह जानता है इसे शुद्ध करना
जिससे नहीं रिसाती है उसकी जाया। ३०।

तुम दोनों पाओ सौभाग्य समूचा
सदा ऋतु का करते पालन
ओ ब्रह्मणस्पति, पति रुचता रहे इसे
और मधुर वाणी इससे बोले। ३१।

ओ गायें तुम भी रहना
साथ इसी के
इसे न छोड़ कर जाना दूर
यह सन्तानों के साथ इसे बढ़ाना। ३२।
स्वस्थ और आरक्त रहो तुम,
सोम की आभा धारे
सारे देव मन तुम दोनों के एक बना दें। ३२।

हे गायों, सन्ततियों के साथ
बनी रहना इसके घर में
पूषा, मरुत्, धाता और सविता सब के सब
अनुकूल बने हों इसके लिये। ३३।

कंटकरहित सीधे हों पथ इसके
जिनसे जाते हों इसके संगी साथी
परिणीता को वरने
भग, अर्यमा, धाता इन्हें भर दें
तेज से। ३४।

जो तेज भरा है पाँसों में,
जो तेज भरा है मदिरा में
जो है गायों में
जो हे अश्विद्वय में
वह तेज सदा
ढके रहे इस नवपरिणीता को। ३५।

इसके भीतर वह सब रहे प्रतिष्ठित
एक गणिका का तेज

जिससे वह बचा कर रखती है जघन अपना*
सुरा का मादक तेज
और जुए के पाँसों की चमक
हे अश्विनीकुमारों वह सब
करना प्रतिष्ठित इसमें। ३६।

जो अनदिखा पानी के भीतर देदीप्यमान है
जिसके विप्र पूजते हैं यज्ञों में
वह अपाम् नपात् मधुमय जल दे दे हम को
जिन से से इन्द्र बना है बलशाली। ३७।

यह मैं निकलता हूँ बाहर
देह के भीतर से
ग्राह
अपना
जिसने रौंद दी है काया
उन्मुक्त उसे करता हूँ फिर
और जो है मंगलमय रोचन। ३८।

लाएँ लाएँ ब्राह्मण जन
इसके स्नान के लिये जल
उँडेल दें जल की वे धाराएँ
जो वीरों को बचाती आई हैं,
करने दो करने दो उसे परिक्रमा
अग्नि की जो अर्यमा की है
ओ पूषन्, देखो कि
इसके श्वसुर और देवर
प्रतीक्षा कर रहे हैं उसकी। ३९।

मंगलमय हो वे सब
सोने के गहने जो तू पहने है,
मंगलमय हो तेरे लिये यह जल
मंगलमय हो यह स्तम्भ।
मंगलमय हो

गाड़ी के जुए का छिद्र
मंगलमय हो जल तेरे हित जो सौ गुना पावन है
मंगलमय हो तेरी काया का
पति से एक होना। ४०।

इस आकाश में जो रथ पर उतरा था,
उस आकाश में जो था गाड़ी पर,
उस आकाश में जो था जुए पर,
ओ शतक्रतु इन्द्र,
अपाला को तीन बार पावन कर
तुमने दिया उसे सूर्य का वर्चस्। ४१।

तुम सदा सौमनस्य की आशा करना,
आशा करना सन्तानों की,
आशा करना सौभाग्य की
सम्पत् की
बनी रहना पति की अनुव्रता,
जुत जाओ तुम
सुख से (गृहस्थी के जुए में)
अमृत के लिये। ४२।

जैसे सिन्धु नदी ने पाया है
नदियों का साम्राज्य अकुंठित
पति के घर में जा कर
ऐसे ही तुम पाओ साम्राज्य। ४३।

साम्राज्य हो तुम्हारा श्वसुर पर
साम्राज्य हो तुम्हारा देवर पर
साम्राज्य हो ननद पर
साम्राज्य हो सास पर। ४४।

यह गृहस्थी के साम्राज्य का परिधान है,
इसे पहन ले,
जो कातती आई हैं इसको,
जो बुनती आई हैं इसको,

जो इसको करती आई हैं विस्तारित,
जो इसके छोरों को
पकड़े रही हैं,
वे अब पहना रहीं है तुझे यह परिधान
बुढापे तक धारण करने को,
हे आयुष्मति, पहन ले यह परिधान। ४५।

जो रो पड़ते हैं कर के हाहाकार
वधू के प्रस्थित होने पर
वे बिगाड़ देते हैं विवाह का यज्ञ
यह जो हैं मंगलमय,
पर बुद्धिमान् जन
दूर तक जाती नववधू के संग
भेजते हैं अपने शुभ विचार
माता और पिता को नहीं सुहाता है उसका यह जो गमन,
वही पति के हित बनता है मंगलमय आलिंगन। ४६।

यह मैंने रख दिया
धरती की गोद में
मंगलमय दृढ एक पत्थर
तू उस पर स्थित हो,
भर जाये गोद तेरी
तू सदा रहे गरिमामय,
प्रसन्न और तेजस्विनी,
सविता तुझ को दें दीर्घ आयु। ४७।

अग्नि ने जैसे धरती का दाहिना हाथ गहा
ऐसे मैं गहता हूँ हाथ तेरा
व्यथित मत हो तू,
साथ रह मेरे
सन्तानों और समृद्धि से भरे पूरे संसार में। ४८।

देव सविता तेरा हाथ गहे,
सोम राजा तुझे अच्छी सन्तति दें,
वेदी में जलती अग्नि दे तुझे सौभाग्य
और पति के संग बुढापे का सुख। ४९।

सौभाग्य के लिये मैं हाथ गहता हूँ तेरा
मैं तेरा पति,
मेरे साथ बुढापे तक तू रहना,
भर्ग, अर्यमा, सविता, पुरन्धि ने
गृहस्थी के लिये
मुझे दिया है तुझ को।५०।

भग ने हाथ गहा है तेरा,
सविता ने हाथ गहा है तेरा,
धर्म से तू मेरी पत्नी बनी,
और मैं बन गया हूँ गृहपति।५१।

अब यह मेरी पोष्या होगी,
बृहस्पति ने दिया है इसे मुझे
हे प्रजावती, मुझ पति के संग
तू रहना सौ बरसों तक।५२।

त्वष्टा ने इसे पहनाया है सुन्दरता का परिधान।
कवियों में शंसित बृहस्पति ने भी
इसलिये इस नारी को सूर्या की तरह
सन्तति से समृद्ध कर दें
सविता और सौभाग्यदेवता।५३।

इन्द्र और अग्नि, धरती और आकाश, पवन, मित्र और वरुण,
भग और अश्विनीकुमार दोनों,
बृहस्पति, मरुत्, ब्रह्म, सोम ये सब
इस नारी को
सन्तानों साथ समृद्धिमय करें।५४।

बृहस्पति ने प्रथम सूर्या के केश सँवारे,
इसीलिये आओ अश्विनीकुमारो,
हम इस नारी को
सजा दें
पति के लिये।५५।

यह है वह रूप,
सँवारा है जिसमें इस नारी ने अपने को,
मैं जानना चाहता हूँ मन में भीतर तक
मैं साथ रहूँगा उसके नौ-नौ सखियों के साथ
ये जो बन्धन उसको जकड़े हैं
तोड़ सकेगा वह ही इनको
जो जानता है।५६।

मैं उतारूँगा रूप इसका
अपने मन के भीतर
मैं झाँकूँगा इसके मन के कुलाय में
चोरी का अन्न नहीं खाता मैं
वरुण के जिन पाशों में यह जकड़ी है,
मैं करता हूँ आयास और शिथिल उनको करता हूँ,
मैं मुक्त इसे करता हूँ।५७।

हे नारी, मैं मुक्ति तुझे देता हूँ, वरुण के पाशों* से
जिन पाशों में तुझको बाँधा था मंगलमय सविता से,
हे नववधू, पति के साथ रहने के लिये
मैं एक बड़ा विश्व तुझे देता हूँ,
मैं एक प्रशस्त पथ तुझे देता हूँ।५८।

उठा लो अपने अस्त्र,
समाप्त कर दो राक्षस को
प्रतिष्ठित कर दो
सुकृत में इस नारी को
जानकार है विधाता,
उसी ने खोज दिया था इसके लिये
यह पति,
और सौभाग्य इन दोनों का
चलेगा अब इनके आगे आगे।५९।

सौभाग्य के देवता ने
गढे चार चरण,

सौभाग्य के देवता ने
गढे चार उष्पल
त्वष्टा ने सजा दिये
कि सुमंगली हो नई वधू यह। ६०।

यह स्वर्णिम रथ तैयार खड़ा है,
सजा हुआ टेसू के फूलों से
निखिल विश्व का रूप समोये,
सुन्दर हैं इसके पहिये,
सुन्दर है इसका चलना,
ओ सूर्य! इस पर आरोहण कर,
अमृतमय नवजीवन में प्रवेश कर,
इस विवाह के रथ को
पति के हित कर दे सुखकर। ६१।

ओ वरुण, हमें दो यह नववधू
यह नववधू जो करुणामयी हो भाइयों के प्रति
ओ बृहस्पति,
हमें दो यह नववधू,
जो गायों के प्रति हो करुणामयी,
ओ इन्द्र,
हमें दो यह नववधू,
जो पति के प्रति हो करुणामय,
ओ सविता,
हमें दो यह नववधू,
जो हो पुत्रवती। ६२।

यह देवों को निर्मित पथ है,
इस पर चल कर
कभी सताना मत इस कुमारी को
तुम दोनों, जो स्तम्भ हो,
यह द्वार है दिव्य भवन का
इस से जाने को
हम सुखमय करते हैं नववधू का मार्ग। ६३।

तेरे पीछे हो ब्रह्म,
तेरे आगे हो ब्रह्म,
इस छोर पर हो ब्रह्म
और ब्रह्म मध्य में हो,
सभी ओर ब्रह्म हो,
सुदृढ देवपुर में पहुँच कर
विराजी रहे तू बन कर,
पति के हित मंगलमय सुखकर। ६४।

(१४/१)

●

* टिप्पणी द्रष्टव्य।

३१

अभय

हमें अभय कर दे अन्तरिक्ष
ये दोनों धरती और आकाश
अभय हमें कर दें,
अभय हमें हो पीछे,
अभय हमें हो आगे,
हमें अभय हो ऊपर
हमें अभय हो नीचे
सदा मित्र से हमें अभय हो
और शत्रु से हमें अभय हो,
जो कुछ जान लिया है उससे
हमें अभय हो,
जो है सम्मुख, उससे
हमें अभय हो,
हमें अभय हो और रात में
सदा दिवस में हमें अभय हो
मित्र हमारी बन जाएँ
ये सम्पूर्ण दिशाएँ।

(१९।१५।५-६)

●

३२

दर्भ

सौ सौ जोड़ों वाला
यह अपनी जड़ से कभी न हिलने वाला,
यह सहस्र पत्तों वाला
ऊपर शीष उठाये
उग्र दर्भ है,
मैंने इसको तुम से बाँध दिया है,
कि तुम जी सको लम्बा एक जीवन। १।

उसका बाल की बाँका नहीं कर सकता कोई,
उसकी छाती पर
मार नहीं सकता है कोई मुक्का,
यह अच्छिन्न पर्ण दर्भ
आसरा जिसे दे रहा है।
हे दर्भ, तेरी जड़ नभ तक फैली है
और धरा पर तू है हुआ प्रतिष्ठित,
सहस्र जोड़ों वाला तू, तुझ से हम पायें दीर्घ आयु। ३।

हे दर्भ, बींध दिये है तूने तीनों व्योम,
बींध डालीं तू ने तीन धराएँ,
मैं तुझ से बींधता हूँ शत्रु को
काटता हूँ उसकी जीभ, उसके वचन को। ४।

तू काबू में करने वाला है,
मैं काबू में लेने वाला हूँ,
तू और मैं हम दोनों काबू में करने वाले,
कर लेगें काबू में शत्रु जनों को। ५।

विद्रोह भरे जो शत्रु हमारे
हे दर्भ उन्हें तू काबू में कर ले,

जो छेड़ रहे हैं हम से युद्ध,
काबू में कर ले सारे शत्रु जनों को,
और बना दे कई कई मित्र हमारे। ६।

दर्भ यह है देवों का बेटा,
यह नभ तक
उठा रहा है अपना मस्तक,
इससे मैंने जन जन को जीता है
और जीतता जाऊँगा मैं आगे भी। ७।

हे दर्भ ब्राह्मण का प्रिय कर दे मुझ को,
हे दर्भ क्षत्रिय का प्रिय कर दे मुझ को,
हे दर्भ शूद्रों का प्रिय कर दे मुझ को,
हे दर्भ आर्य जनों का प्रिय कर दे मुझ को,
जिसको हम चाहें, और हमें जो कोई भी देखे,
उस सब का प्रिय हम को कर दे। ८।

जिसने उगते उगते
इस धरती को दृढ बना दिया है,
जिसने उग कर अन्तरिक्ष और नभ को कर डाला उन्नत,
जो इसको धारण करता है
उसे पाप नहीं वरता है,
वही यह है दर्भ हमारा,
यह दिन की तरह प्रकाशक और सहारा देने वाला
यह दर्भ शत्रुओं का संहारक, सौ-सौ जोड़ों वाला,
यह सब को काबू में करने वाला
सारी औषधियों में सबसे पहले यह जन्मा है,
यह दर्भ हमारी करे रक्षा,
इससे हम जीत सकें उन शत्रु जनों को
जो हम से छेड़ रहे हैं युद्ध। १०।

(१९/३२)

●

३३

कालसूक्त

सात लगामों वाला
काल का घोड़ा
दौड़ रहा है
सहस्रों नयन हैं उसके,
वह अजर है
अतुल उसके भीतर बल है,
उस पर होते हैं सवार,
कविजन और ज्ञानी,
निखिल भुवन हैं,
उसके रथ के ही पहिये। १।

सात पहियों वाले रथ को यह खींच रहा है,
सात नाभियाँ उसके पहियों में,
अमृतमय है उसकी धुरी
वह व्यंजित कर रहा है सारे भुवनों को,
वह चल रहा है—काल,
देवों में प्रथम देव। २।

काल पर रखा हुआ है
भरा हुआ घट,
हम देखते हैं यह पूर्णकुम्भ
नाना रूपों में,
वह सम्मुख है इन सारे भुवनों के,
और फिर है
इन सबके ऊपर परम व्योम में। ३।

सारे भुवनों को उसने
जोड़ रखा है,

सारे भुवनों को उसने भर रखा है,
वह इन का पिता हो कर भी
इन सबका पुत्र बना है,
उसके ऊपर
कोई और नहीं है तेजस्। ४।

काल ने ही यह स्वर्ग रचा है,
काल ने ही इस धरती को सिरजा है,
काल में ही वह सब है गर्भित हिलता,
जो बीत चुका,
और जो होने को है। ५।

काल ने रचा है इस भूति को,
काल में तप रहा है सूरज,
काल में स्थित हैं सारे के सारे प्राणी,
काल में देखती हैं
आँखें यहाँ से वहाँ। ६।

काल में है मन,
काल में हैं प्राण,
काल में समाये हुए हैं नाम।
काल के आने पर
आनन्दित होती हैं सारी प्रजाएँ। ७।

काल में ही है तप,
काल में ही है ज्येष्ठ ब्रह्म
और काल में ही है ब्रह्म जो शेष बचा,
काल ही है सबका ईश्वर,
काल ही है पिता प्रजापति का। ८।

उससे उकसाया,
उससे जन्मा,
प्रतिष्ठित बना हुआ है यह सब।
काल ही बन कर ब्रह्म,
पोस रहा है परमेष्ठी को। ९।

काल ने सिरजा इस सब जनता को,
काल ने उससे पहले रचा प्रजापति को,
स्वयम्भू काश्यप भी जन्मे काल से ही,
और काल से जन्मा तप। १०।

(१९।५३)

●

३४

देह

मुख में मेरे वाणी रहे
नासिका में मेरे साँस रहे
मेरी आँखों में दृष्टि रहे
कानों में सुनने की शक्ति रहे,
केश मेरे रहें काले,
दाँत मेरे रहें श्वेत,
भुजाओं में मेरे बल रहे। १।

जंघाओं में मेरे बल रहे,
पिंडलियों में रहे गीत, पाँवों में रहे प्रतिष्ठा,
मेरा अंग अंग
रहे नीरोग
और गिरा हुआ न हो आत्मा। २।

(११।६०)

●

३५

दीर्घायुष्य

हम देखें सौ शरद्
हम जीयें सौ शरद्
हम जागें सौ शरद्
उगते रहें हम सौ शरद्
पुष्ट होते रहें हम सौ शरद्
बने रहें हम सौ शरद्
सजे रहें हम सौ शरद्
और भी आगे के सौ शरद्, उनके भी आगे के सौ शरद्। १-८।

(१९।६७)

●

टिप्पणियाँ

१. मधुविद्या (१/३४)

यह मधुविद्या सूक्त है। सातवलेकर ने अपने अनुवाद में इसके लिये मधुविद्या शीर्षक ही रखा है। इसके पाँचों मन्त्रों के ऋषि अथर्वा हैं। मधु वनस्पति इसके देवता हैं। पाँचों मन्त्र अनुष्टुप् छन्द में हैं।

१. मूल में 'वीरुत्' शब्द है, जिसका अर्थ यहाँ लता किया गया है। सायण ने इसे विरोहणशीला लता कहा है। आर्यसमाजी व्याख्याकार त्रिवेदी ने इसका अर्थ विद्या किया है व मधूलकम् को ज्ञान का लाभ माना है। 'मधुना त्वा खनामसि' (मधु से है हम तुम्हें खोदते) सायण के अनुसार मधुरूपेण खनित्रादिना—खोदने के लिये खनित्र या कुदाली आदि उपकरण भी मधुमय ही हैं।

मधु से जन्मी हो लता (मधोः अधि प्रजाता असि)—इसका सातवलेकर ने अनुवाद किया है—तू शहद के साथ उत्पन्न हुई है।

२. 'बनी रहो तुम/मेरे मन की सहचर' के लिये मूल है—मम चित्त उपायसि। सातवलेकर के अनुसार अर्थ है—'मधुरता बनी रहे।' निष्क्रमणम्—निकटगमनम् (सायण) यह पत्नी को सम्बोधित है। सातवलेकर के अनुसार अर्थ है—चालचलन।

२. दीर्घायुःप्राप्ति (२/१३)

यह शिशुरक्षण सूक्त है। दीर्घायुःप्राप्ति इसका विषय माना गया है। पाँच मन्त्रों में से प्रथम तीन त्रिष्टुप् हैं, चौथा अनुष्टुप्, पाँचवाँ विराड्जगती है। पाँचों मन्त्रों के ऋषि अथर्वा हैं। अग्नि, बृहस्पति तथा विश्वेदेवाः क्रमशः मन्त्र १, २-३ और ४-५ के देवता हैं। कौशिक ने गोदान या मुण्डन के संस्कार में इसका विनियोग बताया है। बालक को नया वस्त्र धारण कराते समय भी इसका पाठ होता था। इसका पहला मन्त्र यजुर्वेद में भी मिलता है।

१. तुम्हारे आगे घृत—मूल में शब्द है—'घृतप्रतीक'। सायण ने इसका अर्थ घृत के समान अवयव वाला किया है, सातवलेकर ने इसका अर्थ 'घृत के समान तेजस्वी' किया है। तुम्हारे पीछे घृत—इसके लिये मूल में घृतपृष्ठः शब्द है, जिसका अर्थ सातवलेकर 'घृत का सेवन करने वाला' करते हैं।

३. सायण इस मन्त्र को माणवक या बालक के लिये सम्बोधित मानते हैं।

४. 'आ बैठ इस पत्थर पर'—इसके लिये मूल में 'एह्यश्मानमातिष्ठ' है, जिसका भाष्य करते हुए सायण कहते हैं—'दक्षिणेन पादेन आक्राम' (दाहिना पैर ऊपर उठा कर चढ़ो)।

३. अभय (२/१५)

इस सूक्त का विषय अभयप्राप्ति है। अभय अथवा निर्भय होने की कामना प्रकट करने वाले अनेक सूक्त अथर्ववेद में हैं—(जैसे-६/४०, ६/५०, १९/१५, १९/१६ आदि)। ब्रह्मा इस सूक्त के ऋषि तथा प्राण, अपान और आयुष् देवता हैं। इसके छहों मन्त्र त्रिपाद्गायत्री छन्द में हैं। कौशिकसूत्र में इसका मुण्डन-संस्कार तथा आयुष्काम में इसका विनियोग बताया गया है।

रिष्यतः का अर्थ त्रिवेदी के अनुसार है—दुःख देते हैं। ग्रिफिथ ने मेरे प्राण के लिये my spirit यह अनुवाद रखा है।

४. पशुसंवर्धन (२/२६)

यह पशुसंवर्धन सूक्त है। इसके ऋषि सविता और पशु देवता हैं। यह त्रिष्टुप् (१-२), उपरिष्टाद् गायत्री (३), भूरिगनुष्टुप् (४) तथा अनुष्टुप् छन्दों में निबद्ध है। कौशिक के अनुसार १३ द्रव्यों की बलि अर्पित करते समय इसका विनियोग किया जाता है।

१. परेयुः = परे चले गये हैं (सातवलेकर), भटक गये हैं (त्रिवेदी)। पशु से आशय त्रिवेदी ने मनुष्य आदि प्राणियों से लिया है।

संगिनी बन कर जिनके चलती रही हवाएँ—इसके लिये मूल में पाठ है—'सह सञ्चरणं जुजोष'। सायण ने इसके भाष्य में कहा है—'गोष्ठाद् विनिर्गतानां गवां सह वर्तते'—गोशाला से निकली गायों के साथ रहता है।

२. संस्रवन्तु का अर्थ सातवलेकर ने 'मिल कर आ जाएँ' किया है। सायण इसका अर्थ आगच्छन्तु करते हैं। बृहस्पति को त्रिवेदी ने गोपाल भी माना है और सभापति भी। इसी तरह सिनीवाली इनके अनुसार गृहपत्नी भी है और विद्या भी। 'अनुमते आजग्मुषो नियच्छ'—का अनुवाद सातवलेकर ने यह किया है—'हे अनुमति! आने वालों को नियम में रख'।

३. संस्राव्यत्वेन—सातवलेकर के अनुसार 'मिलने वाले'।

४. 'उनके घृत से मैं बल और रस सींच रहा हूँ' इसके स्थान पर सातवलेकर का अनुवाद है—'बलवर्धक घृत को रस के साथ मिलाता है'। 'ध्रुवा गावो मयि गोपतौ' का अनुवाद उन्होंने किया है—मुझ गोपति में गायें स्थिर हों।

५. शालानिर्माण (३/१२)

इस सूक्त के ऋषि ब्रह्मा हैं, तथा देवता शाला या वास्तोष्पति है। शालानिर्माण इसका विषय कहा गया है। त्रिष्टुप् (१), विराड् जगती (२), बृहती (३), शक्वरीगर्भा जगती (६), आर्षी अनुष्टुप् (७), भुरिक् (८) तथा अनुष्टुप् छन्दों का इसमें प्रयोग हुआ है। कौशिकसूत्र के अनुसार यह वास्तोष्पत्य सूक्त है। सम्पूर्ण सूक्त शाला (मकान, घर) को सम्बोधित है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद व्हिटने तथा

देवीचन्द्र दोनों ने आवास (dwelling) किया है। शाला शब्द स्त्रीलिंग में होने से इसके लिये क्रियाएँ या उपमा स्त्रीवाचक हैं, अनुवाद में घर रखने से मूल का भाव यथावत् नहीं रह सका है।

१. निर्मित करता हूँ के लिये मूल में पाठ है—निमिनोमि। सायण ने इसका अर्थ किया है—'प्रक्षिपामि, स्थूणानिखनादिता करोमि'। 'घी की धार बहे इसमें'—इसके लिये मूल में शब्द हैं—घृतम् उक्षमाणा, सातवलेकर के अनुसार घी सींचती हुई। श्रेष्ठ वीर के लिये मूल में पाठ है—अरिष्टवीरा:। सायण ने इसके भाष्य में कहा है—'रोगादिरहिता।'

२. पूतिधान्या पूतिगन्धोपेतजीर्णधान्योपेता (सायण०)।

३. धरुणी ह्विटने के अनुसार garner (सामान इकट्ठा रखने की जगह) है। सायण इसके भाष्य में कहते हैं 'भोगजातस्य धारयित्री' अर्थात् धरुणी भोग्य पदार्थों को धारण करने वाली शाला या गृह है। विकल्प से सायण धरुण का अर्थ स्तम्भ करते हुए चार स्तम्भों से युक्त गृह को धरुणी मानते हैं। विकल्प से वे सातवलेकर ने इसका अनुवाद किया है—धान्यदि का भण्डार धारण करने वाली। 'बृहच्छन्दा:' का अनुवाद ह्विटने ने 'बड़ी छत वाला' (of great roof) किया है, देवीचन्द ने 'lofty roofed' किया है।

५. 'फूस के कपड़े पहने'—इसके लिये मूल है—'तृणं वसाना'—इसका अर्थ सातवलेकर ने किया है—'घास को पहने हुए'।

मानस्य पत्नि: की व्याख्या में सायण कहते हैं—'माननीयस्य वास्तुपते: पत्नी जाया'। 'मानस्य पत्नी' ह्विटने के अनुसार गृहस्वामिनी (mistress of the house) है, देवीचन्द ने इसका अनुवाद किया है—मान बढ़ाने वाली (respect enhancing)

६. वंश का अनुवाद ह्विटने ने beam किया है देवीचन्द ने स्तम्भ (pillar)। 'उपसत्तार:' ह्विटने के अनुसार सेवक (attendants) हैं, देवी के अनुसार शाला में रहने वाले लोग। यहाँ अनुवाद ह्विटने के अनुसार है। 'ऋतेन' का अर्थ सायण करते हैं—आबाध्येन रूपेण। 'जगता सह वत्स:.....'—चलने वालों के साथ बछड़ा भी आये (सातवलेकर)।

७. 'भरा हुआ कलश' के लिये मूल में विशेषण परिस्रुत: है, ग्रिफिथ ने इसका अनुवाद 'झाग से भरा' (fuming) किया है।

६. गोष्ठ (३/१४)

इस सूक्त का विषय गोष्ठ है। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, तथा गोष्ठ, अह:, पूषा, बृहस्पति, इन्द्र व गायें देवता हैं। गोसंवर्धन में इसका विनियोग बताया जाता है। वेतानसूत्र के अनुसार द्वितीय मन्त्र का विनियोग अग्निचयन में किया जाता है।

गायों पर भी अनेक सूक्त अथर्ववेद में हैं। गायों के प्रति हार्दिक ममता की इनमें अभिव्यक्ति हुई है। गाय वाणी, कान्ति और किरण की प्रतीक भी बनती है। आगे 'अघ्न्या' शीर्षक से अनूदित सूक्त भी द्रष्टव्य है।

१. सुषदा—सुख से बैठने योग्य (त्रिवेदी)। 'भरपूर चारे के साथ दिन में होने वाला सुख'—इसके लिये मूल में शब्द हैं—सं रय्या तथा सं भृत्या, जिनका अर्थ सातवलेकर ने किया है—उत्तम जल से युक्त तथा उत्तम रहने व प्रजनन से युक्त।

२. त्रिवेदी के अनुसार—अर्यमा = अरि या शत्रुओं का नियामक गोपाल। संसृजन्तु (एक करें). का अर्थ सायण 'उत्पादयन्तु' करते हैं। सातवलेकर के अनुसार इन्द्र राजा है, और धनञ्जय धन को जीतने वाला।

३. संजग्माना: का अर्थ सातवलेकर मिल कर चलती हुई करते हैं, तथा करीषिणी: का अर्थ इनके अनुसार है—गोबर की उत्तम खाद उत्पन्न करने वाली। अविभ्युषि का अर्थ ह्विटने के अनुसार unaffrighted है, देवीचन्द के अनुसार भय से मुक्त (free from fear)।

४. शकेव का अनुवाद सातवलेकर ने किया है—'साक के समान'। सायण शका का अर्थ मक्षिका करते हैं और व्याख्या में कहते हैं—'शका मक्षिका, तया यूयं पुष्यत'। ह्विटने ने शकेव का अनुवाद नहीं किया है। वेबर ने इसे शकृत् (मल) का पर्याय मान कर इसका अर्थ गोबर कर दिया है। लुडविग भी शकेव का अनुवाद 'गोबर के साथ' (with dung) करते हैं। ग्रिल इसे शाकम् मान कर पौधों के समान (like plants) यह अनुवाद करते हैं। देवीचन्द्र के अनुसार शका का अर्थ पत्नी है।

५. इस मन्त्र में पाठ है—'शारिशाकेव पुष्यत।' सायण ने शारिशाक पाठ मान कर शारिशाक को गायों के घाव में लगने वाला तथा क्षण मात्र में सहस्रों गुना बढ़ने वाले जीव या कीटाणु माना है। (व्रणेन सहस्रशोऽभिवर्धमाना: प्राणिविशेषा: शारिशाका:।) यहाँ अनुवाद देवीचन्द के अनुसार किया गया है। सातवलेकर ने शालि को एक विशेष प्रकार का शाक मान कर 'शालि के साक के समान पुष्ट होओ'—यह अनुवाद कर दिया है। त्रिवेदी ने शारिशाका का अर्थ 'साठी चावल की उपज' किया है। ह्विटने शारिशाका को यथावत् रहने दिया है। लुडविग ने भी इसका अनुवाद छोड़ दिया है। रॉथ शारि को शालि से अभिन्न मान कर like rice in manure अनुवाद करते हैं। ब्लूमफील्ड की व्याख्या भी ध्यातव्य है, जो शालिशूकेव पाठ मान कर अनुवाद करते हैं—'thriv ye like starlings and parrots'. वेबर ने यहाँ भी शारि को गोबर ही मान लिया है। कुछ अनुवादकों ने इसे शारि का या सारि का मान कर एक पक्षी यह अनुवाद कर दिया है।

६. साथ रहो—के लिये मूल में पाठ 'सचध्वम्' है, सायण ने इसका अर्थ किया है—'समवेता भवत'।

७. कृषि (३/१७)

इस सूक्त के ऋषि विश्वामित्र हैं, तथा देवता सीता है। अनुष्टुप्, आर्षी गायत्री (१), त्रिष्टुप् (२, ५, ९), पथ्यापङ्क्ति (३), विराट् पुर उष्णिक् (७) तथा निचृत् (८) छन्दों का इसमें प्रयोग हुआ है। इस सूक्त के अनेक मन्त्र ऋ० में भी मिलते हैं।

१. सीरा: ह्विटने के अनुसार ploughs है, अन्य व्याख्याकारों के अनुसार युग (जुआ) है। सायण ने 'कवय:' की व्याख्या 'मेधाविनो जना:' कहकर की है। सातवलेकर 'देवेषु धीरा: कवय:' यह अन्वय कर के 'देवताओं में बुद्धि रखने वाले कवि जन' यह अर्थ करते हैं। ग्रिफिथ 'सीरा युञ्जन्ति कवय:' का अनुवाद करते हैं—wise bind plough ropes fast तथा सीता को वे furrow (हल चलने से बनने वाली रेखा) कहते हैं।

२. ह्विटने ने उत्तरार्ध को अस्पष्ट कहा है। विराज: श्नुष्टि: की व्याख्या में सायण कहते हैं—अन्नस्य ब्रीहियवादिरूपस्य श्नुष्टि: स्तम्भ: आशुप्रापक:। 'विराज: श्नुष्टि:' का अनुवाद सातवलेकर ने अन्न की उपज किया है। श्नुष्टि: ह्विटने के अनुसार गुच्छा (bunch) है, देवी के अनुसार फल या परिणाम, त्रिवेदी के अनुसार फसल। श्नुष्टि शब्द आगे ३/३० में भी आया है, इस पर यहाँ भी टिप्पणी द्रष्टव्य है। सृण्य: को ह्विटने ने sickles (हँसिया या दराती) माना है, त्रिवेदी ने भी इसे हँसुवा या दराती कहा है। सातवलेकर के अनुसार भी सृण्य हँसिया है।

3. यहाँ पवीरम् और सृशीमम् ये दोनों हल के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हैं। सायण ने पवीरम् का अर्थ वज्रमिव निशितधारम् किया है और सुशीमम् का सुखकरम्। सातवलेकर पवीरवत् सुशीमम् यह अन्वय मान कर वज्र के समान कठिन यह व्याख्या करते हैं। त्सरु तलवार आदि की मूठ के अर्थ में आता है। सायण ने 'त्सरु:' को भूमि में भीतर धँस कर गमन करने वाला तथा किसान के हाथ से पकड़ा जाने वाला यन्त्र विशेष कहा है। त्रिवेदी के अनुसार पवीर फाल है, सोमसत्सरु ऐश्वर्ययुक्त मूठ वाला है। लांगल और हल को त्रिवेदी ने एक ही माना है, तथा 'प्रफर्व्य' को शीघ्र गति वाला कहा है।

६. शुनम् का अर्थ त्रिवेदी के अनुसार मुख में है, तथा अष्ट्राम् पैना अरा व काँटा है।

७. शुनासीरा यहाँ द्विवचन में है, सायण इसे देवतावाचक मानते हैं। त्रिवेदी ने इसका अर्थ वायु और सूर्य किया है। यह शब्द ऋ० ४/५७/८ में भी आया है। 'बनो सहायक मेरे' के मूल 'इह स्म मे जुषेथाम्' का सातवलेकर अर्थ किया है—'मेरे हवन को स्वीकार करो'। तुमने स्वर्ग में बहाई है जो दूध की धार—'यत् पयो दिवि चक्रतु:' का आशय उनके अनुसार है—जो जल तुमने आकाश में बनाया है।

८. समृद्धिप्राप्ति (३/२४)

इस सूक्त का विषय समृद्धिप्राप्ति है, इसके ऋषि भृगु हैं, तथा वनस्पति और प्रजापति देवता हैं। अनुष्टुप् और निचृत्पथ्यापङ्क्ति छन्दों का इसमें प्रयोग हुआ है। कौशिकसूत्र ने धान्यवृद्धि के अनुष्ठान में इसका विनियोग माना है।

१. पयस्वती का अर्थ सातवलेकर के अनुसार रसवाली तथा त्रिवेदी के अनसुार सार वाली है। सायण ने भाष्य में सारवत्य: रखा है। यहीं पर वचन के विशेषण के लिये फिर पयस्वत् शब्द आया है, सायण यहाँ भी 'पयस्वत् सारयुक्तम्'—के द्वारा ही व्याखया करते हैं।

२. अयज्वनो गृहे—का अर्थ सातवलेकर ने 'अयाजक के घर में' किया है। सम्भृत्वन् ह्विटने के अनुसार collector है। सम्भृत्वा नाम यो देव:—का अर्थ ग्रिफिथ ने किया है—'god whose name is gatherer'.

३. इस मन्त्र में पाँच दिशाओं का उल्लेख आया है। सायण ने इसके भाष्य में प्राच्याद्या: पञ्च दिश: इतना ही कहा है। स्फाति का अर्थ सातवलेकर वृद्धि करते हैं। पाँच कुटुम्ब मनुजों के—इसके लिये सायण कहते हैं—निषादपञ्चमाश्चत्वारो वर्णा:। समावहान्—का अर्थ सायण करते हैं—'समानहन्तु'।

४. सङ्किर का अर्थ देवीचन्द ने दान दो (give in charity) किया है, ह्विटने ने संचय करो (pile together)।

६. सातवलेकर गन्धर्व का अर्थ भूमि को धारण करने वाला—यह करते हैं।

७. ह्विटने के अनुसार उपोह लाने वाला (bringer) और समूह एकत्र करने वाला (gatherer) है। देवीचन्द ने इन दोनों शब्दों का अर्थ क्रमश: संचय और संरक्षण (colletion and preservation) किया है। ग्रिफिथ इनका अर्थ adding and gathering करते हैं। सायण के अनुसार ये अभिमत कार्य सम्पादन करने वाले सारथि हैं। समूह की व्याख्या करते हुए सायण कहते हैं—समीपम् ऊहति प्रापयति धान्यादिकम्, समूहति वर्धयति। त्रिवेदी ने भी उपोह को योग तथा समूह को संग्रह माना है, तथा क्षत्तार: को क्षति से बचाने वाले कहा है।

९. काम का बाण (३/२५)

इस सूक्त का विषय काम का बाण है। भृगु इसके ऋषि हैं, मित्रावरुण तथा काम का बाण इसके देवता हैं। अनुष्टुप् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। यह प्रेमिका को वश में करने के लिये विनियुक्त होंने वाला टोना (अभिचार सूक्त) है। कौशिकसूत्र तथा अन्य सूत्रग्रन्थों ने इसका पाठ करते हुए कौन कौन-सी क्रियाएँ की जायेगी—इसका विवेचन करते हुए अभिचार के अनुष्ठान का विवरण भी दिया है। इस अभिचार में प्रेमिका की मूर्ति में सचमुच का बाण चुभाया जाता है। सायण के अनुसार यह वशीकरण सूक्त है। इसका जाप करते हुए वशीकार्य स्त्री को अंगुलि से कोंचना चाहिए और बेर के २१

काँटे घी में सान कर २१ बदरी प्रान्तों को सूत से बाँध कर इस सूत से हवन करना चाहिये। कुष्ठ फल को मक्खन से सान कर तीन बार आग में तपाने का भी निर्देश अन्य टोटकों के साथ सायण ने यहाँ दिया है। इनमें अन्तिम अनुष्ठान स्त्री की प्रतिकृति या पुतले को बाण से बींधने का है। त्रिवेदी ने पूरे सूक्त के कामपरक अर्थ की सर्वथा उपेक्षा कर के अविद्या के नाश और विद्या की प्राप्ति को इस सूक्त का विषय मान कर तदनुसार अनुवाद किया है। इसके अनुसार प्रथम तीन मन्त्र अविद्या के नाश की कामना के हैं, और शेष तीन विद्या के आह्वान के। मध्यम पुरुष वाचक एक ही सर्वनाम पहले तीन मन्त्रों में अविद्या का वाचक हो जाता है और वही शेष मन्त्रों में विद्या का! सातवलेकर ने इस सूक्त को विरुद्धपरिणामी अलंकार का उदाहरण माना है, अर्थात् काम का शल्य भयंकर होता है यह इस में कहा गया है अत: ऋषि यह संदेश दे रहे हैं कि काम या वासना से दूर रहना चाहिये।

काम या प्रेम के विषय में अथर्ववेद में अनेक अत्यन्त मनोहारी सूक्तहैं। इनमें से तीन (३/२५, ६/८, ६/९) यहाँ अनूदित हैं।

१. यह कोंचने वाला प्रेम/कोंच कोंच कर तुझ को/जगा दे तेरे भीतर प्रेम—इसके लिये मूल में उत्तुदस्त्वोत् तुदतु है, सायण ने 'उत्तुदतु' का भाष्य 'कामार्ता करोतु' किया है, सातवलेकर ने 'हिलाने वाला काम तुझे हिला दे' यह अर्थ किया है। ब्लूमफील्ड ने इसका अनुवाद किया है—'May (love) disquieter, disquiete thee' ह्विटने कहते हैं—let the upthruster thrust thee up. और ग्रिफिथ Let the impeller goad thee यह अनुवाद करते हैं।

२. प्रेम के रस में बुझा हुआ यह—इसके लिये मूल में कामशल्या शब्द है, ब्लूमफील्ड ने इसका अनुवाद किया है—'barbed with love' सायण ने शल्याम् का—बाणाघ्रे प्रोतम् आयसं, काम एव शल्यम् यह भाष्य किया है।

३. प्लीहानम्—ह्विटने के अनुसार lungs अन्य अनुवादकों ने इसका अनुवाद चिड़चिड़ापन किया है। सातवलेकर प्लीहा का अर्थ तिल्ली (ज़िगर) ही करते हैं। कुल्मल के लिये सायण ने दो अर्थ बताये हैं दारु और शल्य। तृतीय पाद में व्योषा शब्द चिन्तनीय है। सायण ने इसकी व्याख्या में कहा है—'विविधं ओषति दहति इति व्योषा' ब्लूमफील्ड ने इसका अनुवाद 'जो जल रहा है'—यह किया है, ह्विटने ने consuming या सोखने वाला कहा है। प्राचीनपक्ष का अनुवाद ह्विटने ने forward winged रखा है, ब्लूमफील्ड ने लिखा है—whose plume flies forward। 'तू मेरी होगी' के लिये मूल में केवली शब्द है, जिसकी व्याख्या में सायण कहते हैं—'असाधारणा मदेकशरणी।'

४. 'पीर से बिंध चुकी गहरे तक' के मूल 'शुचाविद्धा व्योऽषया' का अनुवाद ब्लूमफील्ड ने consumed with burning adour किया है।

५. 'आजानी' को सायण ने कशा कहा है ब्लूमफील्ड और ह्विटने दोनों ने भी अंकुश (goad) माना है। 'कोंचता हूँ' के लिये मूल में आजामि है, जिसका भाष्य सायण यों करते हैं—कशया आताड्य अभिमुखं प्रेरयामि।

देवीचन्द ने क्रतावसो पाठ लिया है। ह्विटने ने क्रातु को पृथक् शब्द मान कर इसका अर्थ power किया है।

६. हृदश्चितान्यस्यतम् (उखाड़ फेंको उसके हृदय से/उसका चित्त) ब्लूमफील्ड के अनुसार—All her thoughts drive out from her (उसके सारे विचार उसके भीतर से निकाल दो)। ह्विटने के अनुसार—'cast out the intents from her heart', तृतीय चरण में 'अर्थनामक्रतुं कृत्वा' का अनुवाद ब्लूमफील्ड और ह्विटने दोनों में अस्पष्ट है। 'उसे अवश कर दो' के लिये मूल में 'अक्रतुम्' शब्द है, सायण ने इसका अर्थ 'कार्याकार्यविभागशून्यम्' किया है। ग्रिफिथ इसके अनुवाद में कहते हैं—'deprive her of her own free will' (उसे उसकी स्वतन्त्र इच्छाशक्ति से वंचित कर दो)।

१०. साम्मनस्य (३/३०)

इस सूक्त का विषय साम्मनस्य है। अथर्ववेद में साम्मनस्यपरक अनेक सूक्त हैं, जिनमें परस्पर चित्तैकीकरण (६/४२), मन्युशमन (६/४३) तथा आगे यहाँ अनूदित साम्मनस्य शीर्षक से ही अन्य सूक्त (६/६४) आदि उल्लेखनीय हैं। अथर्वा इसके ऋषि हैं, चन्द्रमा तथा साम्मनस्य इसके देवता हैं। अनुष्टुप् विराट् जगती (५), प्रस्तारपङ्क्ति (६), तथा त्रिष्टुप् (७) छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। इसका विनियोग जन समाज में सौहार्द्र स्थापित करने के लिये किये जाने वाले मांगलिक अभिचारों में है। सायणभाष्य के अनुसार यह सूक्त गणकर्म या उपाकर्म (संस्कार-विशेष) के अन्तर्गत पठित है। सायण ने इसके विनियोग इस प्रकार बताये हैं—साम्मनस्य कर्म, गाँव में पानी व सुरा के घड़े ले जाते समय, तीन वर्ष की बछिया के मांस का भोजन करते हुए व सुरापान करते समय, प्रपा से जल पीते समय और उपाकर्म।

३. सम्यञ्चः का अर्थ सातवलेकर 'अधिक मत वाले' करते हैं।

५. ज्यायस्वन्तः सातवलेकर के अनुसार वृद्धों का सम्मान करने वाले। ह्विटने ने जायस्वन्तः का अर्थ श्रेष्ठतर (superiors) किया है। 'सधुराः' ह्विटने के अनुसार सह-श्रम (joint labour) है, सध्रीचीनाः संगठित (united)।

७. संवनन—परस्पर सेवा करने का भाव (सातवलेकर)। 'सध्रीचीनान्'—सह प्रवर्तमानान् (सायण)। एकश्नुष्टिम्—एकविधं व्यापनम्, एकविधस्य अन्नस्य भुक्तिं वा (सायण)। एकता की डोर से—इसके लिये मूल में 'योक्त्रे' शब्द है, सायण ने इसके भाष्य में कहा है—'बन्धने स्नेहपाशे'।

११. वृष्टि (४/१५)

इस सूक्त का विषय वृष्टि है। अथर्वा इसके ऋषि हैं, दिशाएँ (१), वीरुध् या लताएँ (२,३), मरुत् और पर्जन्य (४), मरुत् और आपस् (५-१०), प्रजापति और स्तनयित्नु (११), वरुण (१२), मण्डूक और पितर (१३-१५), और वात (१६) इसके देवता हैं। त्रिष्टुप्, विराट् जगती (१, २, ५), विराट् पुरस्ताद् बृहती (४), अनुष्टुप् (७, १३), पथ्यापङ्क्ति (१९), भुरिक् (१०), पञ्चपदानुष्टुब्गर्भा भुरिक् (१२) तथा शङ्कुमत्यनुष्टुप् (१५) छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। इस सूक्त का विनियोग वर्षा कराने के अनुष्ठान में माना गया है। सायण के अनुसार वर्षा की कामना से मरुत् आदि के लिये इस सूक्त के द्वारा आज्यहोम किया जाता है। इसमें अभिमन्त्रित औषधियाँ अथवा कुत्ते या भेड़ का सिर जल में डाला जाता है, साथही मनुष्य के केश या पुराने जूते बाँस से बाँध दिये जाते हैं। फिर तुष सहित आमपात्र को तीन पाँव वाले छींके पर रख कर पानी में फेंका जाता है।

१. नभस्वती: ह्विटने के अनुसार तुषारावृत (misty) है।

२. तविषा के लिये सायण ने कहा है—'महन्नामैतत्'। ह्विटने के अनुसार तविषा = बलशाली (mighty), सुदानु = उदार (liberal)।

त्रिवेदी ने तविषा को विशाल गुण वाला कहा है।

५. 'वाश्रा:' का अर्थ त्रिवेदी ने धड़धड़ाती हुई किया है।

६. इस मन्त्र में आशारेपी शब्द आया है, जिसका अर्थ सायण ने सूर्य किया है।

८. सुदानव: = शोभनदाना: मरुत: (सायण)।

११. त्रिवेदी के अनुसार प्रजापति सूर्य है, अश्वस्य का अर्थ है मेघ।

१२. असुर: = मेघानां क्षेप्ता (सायण)। इसी मन्त्र में गर्गरा: शब्द आया है, सायण ने इसके लिये लिखा है—'अनुकरणशब्दोऽयम्'।

१९. ह्विटने ने तादुरी का अनुवाद नहीं किया है। त्रिवेदी के अनुसार तादुरि का अर्थ है—तैरने वाली या जितना शरीर उतने उदर वाली। सायण ने खण्वख, खैमखै,तदुरी तादुरी आदि को मेढकों की प्रजातियाँ माना है।

१२. गायें (४/२१)

इस सूक्त का विषय गायें हैं। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, गायें ही इसकी देवता हैं। त्रिष्टुप् और जगती (२-४) छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। ऋ० में भी यह सूक्त पाठभेद के साथ मिलता है। इसका विनियोग गोसंवर्धन में माना गया है। त्रिवेदी के अनुसार गायें यहाँ विद्याएँ हैं, और गोष्ठ विद्या समाज।

२. खिल्य ह्विटने के अनुसार अखंड क्षेत्र (undivided domain) है। देवीचन्द ने इसे state of eternal joy माना है। देवयु का अर्थ ह्विटने godly man करते हैं, देवीचन्द पावन (pious)।

४. संस्कृतत्र को ह्विटने ने बूचड़खाना (slaughter house) माना है, देवी, इसका अनुवाद shambles करते हैं। अर्वा ह्विटने के मत में धूल उड़ाता घुड़सवार (dust raising horseman) है ग्रिफिथ के अनुसार, 'the charger with dusty eye-brow', देवी ने इसे धूल उड़ाने वाला योद्धा (fighter raising the dust) कहा है। ऊरुगाय को देवी ने विस्तीर्ण चारागाह (side-spread pasture) माना है, ह्विटने ने विस्तीर्ण (widegoing)।

६. अश्रीरस् ह्विटने के अनुसार असुन्दर (unlovely) है, देवीचन्द के अनुसार ugly, सुप्रतीकम् का अर्थ ह्विटने ने of good aspect किया है, देवीचन्द ने सुन्दर (beautiful), 'पुष्ट कर दो' इसके लिये 'मेदयथा:' शब्द मूल में है, ग्रिफिथ ने इसका अनुवाद fatten किया है।

१३. गर्भाधान (५/२५)

इस सूक्त का विषय गर्भाधन है। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, गर्भ तथा पृथिवी आदि इसके देवता हैं। अनुष्टुप् और विराट्पुरस्ताद्बृहती छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशकसूत्र के अनुसार इसका विनियोग पुंसवन संस्कार में किया जाता था।

१. पर्वत का अर्थ ह्विटने के अनुसार बादल (cloud) है, योनि गर्भ (womb) तथा शेप जननेन्द्रिय (virile organ) है। सिनीवाली का अर्थ त्रिवेदी ने 'अन्नवाली पत्नी' किया है।

५. पिंशन्तु का अर्थ त्रिवेदी ने 'जोड़ जोड़ कर बनायें' किया है।

८. वृषा का अर्थ ह्विटने ने प्रजननशक्ति सम्पन्न (virile) किया है।

९. ह्विटने ने बार्हत्सामी को यथावत् रखा है, देवीचन्द ने इसका अनुवाद बृहत् साम का गायन करने वाली (singer of great Saman) किया है।

११. 'गवीन्यो' का अर्थ त्रिवेदी के अनुसार है—दोनों पार्श्वस्थ नाड़ियों में।

१४. कामात्मा (६/८)

इस सूक्त का विषय काम है। जमदग्नि इसके ऋषि हैं, कामात्मा, सुपर्ण (२०), द्यावापृथिवी (३), और सूर्य इसके देवता हैं। पथ्यापङ्क्ति छन्द इमें प्रयुक्त हैं। कौशीतकि ने ६/८ तथा ६/९ इन दोनों सूक्तों को वशीकरण सूक्त माना है। देवीचन्द ने इस सूक्त का अनुवाद प्रेमिका को विद्या (knowledge) मान कर किया है, दूसरे मन्त्र में 'ते मन:' उनके अनुसार तेरा मन न हो कर मेरा मन हो जाता है।

काम या प्रेमविषयक अनेक सूक्त अथर्ववेद में हैं, जिनमें से काम का बाण (३/२५) यहाँ पहले आ चुका है। ये सूक्त स्त्री के वशीकरण के लिये अनुष्ठित होने वाले अभिचारों में विनियुक्त होते हैं। अगले सूक्त पर टिप्पणी भी द्रष्टव्य है।

१५. कामात्मा-२ (६/९)

इस सूक्त का विषय भी काम है। जमदग्नि इसके ऋषि हैं, कामात्मा और काम का बाण इसके देवता हैं। अनुष्टुप् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। अथर्ववेद के २/३०, ६/८, ९ तथा ६/१०२ आदि सूक्त स्त्री के वशीकरण के लिये अनुष्ठित होने वाली अभिचारों में विनियुक्त होते हैं। इस सूक्त का अनुवाद देवीचन्द ने भी सीधे आधिभौतिक दृष्टि से ही किया है।

१. मैं तुझे सींच सकने वाला/तेरी आँखें, तेरे केश/कामना से सोख रहे हैं मुझ को, इसके लिये मूल है 'अक्ष्यौ वृषणन्त्या केशा मां के कामेन शुष्यन्तु'। इसका अनुवाद सायण भाष्य के अनुसार किया गया है। वृषणन्त्याः अर्थ सायण ने किया है। 'वृषाणं सेचनसमर्थं युवानम् आत्मन इच्छन्याः।' शुष्यन्तु को सायण ने वर्तमानकाल के अर्थ में लिया है।

२. सुपर्ण को कुछ व्याख्याकारों ने गरुड माना है, कुछ ने बाज। सायण ने इसका अर्थ गरुत्मान् ग्रिफिथ अपने अनुवाद में कहते हैं—eagle strikes downward. 'दोषनिश्रिषं' का अर्थ सायण के अनुसार 'बाहौ आसक्ताम्' है।

३. गायों के लिये 'स्रदि संवननं कृतम्' तथा 'नाभिशरेहणम्' ये शब्द प्रयुक्त हैं। सायण ने इसकी व्याख्या में कहा है—"नाभ्युपलक्षितमङ्गं आरेहणम् आलेहनं आस्वादनीयं भवति, यासां च हृदि हृदये सेवनम् सम्भवति चित्तं वशीकरणं कृतं विदात्रा निर्मितम्।" संवनन का अर्थ यहाँ ह्विटने ने हृदयसंवाद (conciliation) किया है। देवी और ब्लूमफील्ड ने प्रेम। ब्लूमफील्ड आदि ने नाभिशरेहणम् पाठ माना है, सायण और सातवलेकर ने नाभिरारेहमम्। ह्विटने ने नाभिशरेहणम् का अर्थ किया है—'whose naval is licking' जबकि ब्लूमफील्ड इसका शाब्दिक अर्थ whose relations are licking करते हैं; और अनुवाद who lick their young. देवीचन्द ने इस शब्द पर कदाचित् विचार नहीं किया है। त्रिवेदी ने 'शरेहणम्' के स्थान पर 'आरेहणम्' पाठ लिया है, और 'आरेहणम्' का अर्थ किया है—प्रशंसा। संवानयन्तु देवी के अनुसार अर्थ है incline her to love me ह्विटने के अनुसार conciliate her younder to me, ब्लूमफील्ड के अनुसार make younder woman bestow love upon me. ग्रिफिथ के अनुवाद में कहते हैं—whose kisses are a bond a love charm lend within the heaven. गायों के ही लिये यहाँ घृतस्य मातरः यह विशेषण प्रयुक्त है, सायण के अनुसार घृत से स्नेह उपलक्षित होता है।

१६. गर्भदृंहण (६/१७)

इस सूक्त का विषय गर्भदृंहण (गर्भ को स्थिर करना, गर्भपातनिवारण) है। अथर्वा इसके ऋषि हैं, पृथिवी इसकी देवता है। अनुष्टुप् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिक सूक्त में यह गर्भदृंहणानि (गर्भ को दृढ़ करने वाले) अनुष्ठान में विनियुक्त

है। अच्युत इसका प्रतीक है। स्त्री के गर्भ पर धनुष की डोर बाँधी जाती है, और उसे मिट्टी खाने को दी जाती है।

३. ब्लूमफील्ड ने पर्वत का अर्थ mountain तथा गिरि का अर्थ पहाड़ की चोटी (peak) किया है। ह्विटने ने पर्वत का अर्थ rugged (ऊबड़खाबड़) तथा गिरि का अर्थ mountain किया है। देवीचन्द इन्हें क्रमशः पहाड़ और पहाड़ियाँ मानते हैं।

४. विष्ठित का अर्थ ह्विटने के अनुसार विविध (various) है, देवीचन्द ने इसे चेतन और जड़ (animate and inanimate) का वाचक माना है।

१७. साम्मनस्य (६/६४)

यह सूक्त साम्मनस्य सूक्त कहा गया है। साम्मनस्य शीर्षक वाले अन्य सूक्त भी अथर्ववेद में हैं, इनमें से ३/३० का अनुवाद ऊपर आ चुका है। षष्ठ कांड में ही ७४वाँ सूक्त भी साम्मनस्य सूक्त है। सायण ने इस सूक्त का विनियोग इस प्रकार बताया है—उदकुम्भ (पानी से भरे घड़े) या सुराकुम्भ को गिरा कर अभियन्त्रित कर के ग्राम के मध्य में ले जाया जाता है, तीन वर्ष की बछिया का मांस इस सूक्त के साथ अभिमन्त्रित करते हुए पकाया जाता है, और भात के साथ खिलाया जाता है, साथ में सुरा भी दी जा सकती है।

इस सूक्त के तीनों मन्त्र ऋग्वेद के संज्ञान सूक्त (१०/१९१) में प्राप्त होते हैं। केवल दूसरे मन्त्र में पाठभेद है। संज्ञान सूक्त के चार मन्त्र हैं, इनमें केवल पहला मन्त्र अथर्ववेद के इस सूक्त में नहीं मिलता। पहले आ चुके साम्मनस्य सूक्त का भी विनियोग सायण ने इसी प्रकार बताया है।

१८. अघ्न्या (६/७०)

इस सूक्त का विषय अघ्न्या (न मारी जाने वाली गाय) है। काङ्कायन इसके ऋषि हैं, अघ्न्या इसकी देवता है। जगती छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिक ने इस सूक्त का विनियोग गाय और बछड़े में परस्पर प्रेमसंवर्धन (संवनन) में बताया है, सायण ने गो और वत्स के साम्मनस्य में। कौशिक सूत्र के अनुसार बछड़े को नहला कर गोमूत्र से सिंचित कर के तीन बार परिक्रमा कराई जाय, फिर अभिमन्त्रित कर के उसे गाय के थन पीने के लिये छोड़ा जाय।

इस सूक्त तथा ऋ० और अथर्ववेद के अनेक सूक्तों में गाय के लिये अघ्न्या शब्द का प्रयोग है। अघ्न्या का अर्थ है जिसका हनन या हिंसा न की जाय। गाय के लिये अघ्न्या कहीं विशेषण के रूप में, तो कहीं गाय के पर्याय के रूप में जातिवाचक संज्ञा की तरह भी किया गया है। पं० दामोदर सातवलेकर आदि वैदिक विद्वानों के अनुसार गाय के लिये इस संज्ञा या विशेषण के प्रयोग से सिद्ध होता है कि वैदिक काल में गोहिंसा सर्वथा वर्जित थी। ह्विटने आदि पाश्चात्य विद्वानों की धारणा है कि

अघ्न्या गाय की एक विशेष कोटि के लिये ही संहिताओं में प्रयुक्त है, ऐसी गाय जो दूध देती हो, और अभी वधशाला में भेजने के योग्य नहीं है, अघ्न्या है।

१. अधिवेदन ह्विटने के अनुसार द्यूत का फलक (gambling board)। ह्विटने के अनुसार मदिरा (strong drink) है। त्रिवेदी के अनुसार मांस का अर्थ यहाँ ज्ञान है। सुरा ऐश्वर्य के वाचक है, तथा अक्ष व्यवहार का, और अधिवेदन व्यवहारयुक्त राजद्वार है।

देवीचन्द ने भी इस सूक्त के मन्त्रों के विभिन्न संज्ञाओं के अर्थों के स्थूल भौतिक अर्थों को अस्वीकार कर के मांस का अर्थ विद्या (knowledge), सुरा का अर्थ समृद्धि (prosperity), अक्षा: का अर्थ various dealings, अभिवेदन का अर्थ राजपद (kingship), अघ्न्या या गो का अर्थ जीव (unassailable subject) किया है, तो वत्स का अर्थ उन्होंने सर्वव्यापी परमात्मा (all pervading God) किया है। दूसरे और तीसरे मन्त्रों में हाथी-हथिनी, पहिये-तीलियाँ, व स्त्री-पुरुष के उपमावाची शब्दों का तो कोई आध्यात्मिक अर्थ निकाल पाना सम्भव न था, अत: उन्हें उन्होंने भौतिक रूप में ही ग्रहण किया है। ग्रिल ने प्रथम पाद का अर्थ किया है—जैसे सुरा मांस के साथ चलती है। सायण ने 'जैसे मांस खाने वाला मांस चाहता है, जैसे सुरा पसंद की जाती है'—इस प्रकार से अर्थ किया है। वृषण्यत: का अर्थ सायण के अनुसार 'वृषाणं सेक्तारम् आत्मानम् इच्छत:' अर्थात् सुरतार्थी है। निहन्यते का अर्थ सायण ने प्रह्वीभवति (झूकता है) किया है।

२. 'जैसे हाथी जोड़ता है हथनी के पग से अपना पग'—इसमें मूल है 'हस्तिन्या: पदेन पदमुद्युजे।' ब्लूमफील्ड ने 'हथिनी के कदमों के साथ अपने कदम आगे बढ़ाया है' ('directs his steps after the steps of the female')—यह अनुवाद किया है, ह्विटने ने अनुवाद किया है—strains foot with the foot of the she-elephant.

३. प्रधि को सायण ने नेमि (पहिये का घेरा) माना है, उपधि को समझाते हुए वे कहते हैं—'नेमिसम्बद्ध- अराणां सम्बन्धको वलय:।' प्रधि का अर्थ ब्लूमफील्ड के अनुसार felloe है, ह्विटने के अनुसार felley तथा उपधि का अर्थ ब्लूमफील्ड में पहिये को तीलियाँ (spokes) है, ह्विटने में rim है। देवी ने प्रधि को iron felly कहा है, उपाधि को wooden wheel, जबकि मन्त्र में पुन: प्रधि आया है, उसका अर्थ वे rim ही करते हैं। वृषायत: ह्विटने के अनुसार वासनामय (lustfull) है, देवीचन्द के अनुसार शक्तिशाली।

१९. सौभाग्यवर्धन (६/१३९)

इस सूक्त का विषय सौभाग्यवर्धन है। अथर्वा इसके ऋषि हैं, वनस्पति इसकी देवता है। अनुष्टुप् तथा षट्पदा विराट् जगती छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिकसूत्र ने इसे ६/१२९ तथा ७/३८ के साथ सौभाग्यवर्धन सूक्तों में परिगणित किया है।

कौशिकसूत्र के अनुसार अभिचारकर्ता सुवर्चला लता को खोद कर उसका सफेद फूल अपने माथे पर बाँधता है, और अपने गाँव लौटता है। सायण ने इसका विनियोग स्त्री के वशीकरण में भी बताया है।

१. सायण ने इस मन्त्र को शंखपुष्पी लता के लिये सम्बोधन माना है। 'यह रोपी हुई धरा पर' इस अनुवाद का मूल है 'न्यस्तिका', जो विन्यस्त है जमी हुई है या अच्छी तरह रोपी गई है यह अर्थ मैंने लिया है। सायण ने दुर्भाग्य को दूर हटाने वाली (दौर्भाग्यलक्षण नितराम् अस्यती त्वम्) यह अर्थ लिया है। यह लता दुर्भाग्य को दूर करने वाले अभिचार में प्रयुक्त होने से न्यस्तिका कही जाती है—यह व्याख्या भी सायण करते हैं। ब्लूमफील्ड ने न्यस्तिका का अर्थ किया है—clinging to the ground, पर टिप्पणी में कहा गया है कि यह अनुवाद अंदाज भर है, न्यस्तिका लताविशेष का नाम होने की सम्भावना भी उन्होंने मानी है। कुह्न और लुडविग के अनुसार भी न्यस्तिका लता का नाम हो सकता है। न्यस्तिका शब्द अनोखा ही है। ह्विटने ने इसका कोई अनुवाद न कर के यथावत् रहने दिया है। सायण ने न्यस्तिक का अर्थ किया है नितराम् अस्यति (अभिचार आदि चलाने वाली)। ओल्डेनबर्ग इसे न्यस्तक (संलग्न, फेंका हुआ, उपेक्षित) का स्त्रीलिंग मानते हैं। सायण के अनुसार इस मन्त्र में सूचित सहस्रपर्णी औषधि शंखपुष्पी है। प्रतान का अनुवाद ग्रिफिथ ने tendril किया है, देवीचन्द ने इस मन्त्र का प्रतीकात्मक अनुवाद किया है, सुभगंकरणी लता विद्या है, सौ शाखाएँ ज्ञान के सौ अंग हैं, तैंतीस नितान तैंतीस देवता हैं। सायण ने प्रतान का अर्थ शाखाएँ तथा नितान का अथ प्ररोह या अंकुर किया है।

३. संवनन का अर्थ सायण ने यहाँ वशीकरण लिया है, तथा समुष्फला का सम्यक् उप्तफला। संवनन शब्द विभिन्न अर्थों में अनेक सूक्तों में अथर्ववेद में आया है।

२०. शिशुसंवर्धन (६/१४०)

इस सूक्त का विषय सुमङ्गल दन्तयुगल (शिशु के पहले दौत) हैं। अथर्वा इसके ऋषि हैं, ब्रह्मणस्पति और दाँत इसके देवता हैं। अनुष्टुप्, उरोबृहती, उपरिष्टाज्ज्योतिष्मती त्रिष्टुप् तथा आस्तार पङ्क्ति छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिक के अनुसार इसका विनियोग बच्चे के ऊपर के दो दाँत आने पर किये जाने वाले संस्कार में होता है। इस संस्कार में बालक को वे पदार्थ खिलाये जाते हैं, और उसके आसपास बिखेरे जाते हैं, जिनका उल्लेख सूक्त में हैं, तथा उसके पश्चात् बालक के माता और पिता उबला धान खाते हैं।

पहले और अन्तिम म्त्र में यह भय प्रकट किया गया है कि शिशु के दो उगते दाँत बच्चे के माता और पिता को खा जायेगें। इस सूक्त से जुड़ा अनुष्ठान इस अमंगल के निवारण के लिये भी है। कौशिकसूत्र के अनुसार इस आशंका के मूल में

यह लोकविश्वास है कि बच्चे के पहले दो दाँत आने पर माता और पिता की मृत्यु सम्भावित है। सायण के अनुसार बालक या बालिका के पहले दो दाँत निकलने से बनने वाले दोष के परिहार के लिये ब्रीहि, जौ तथा तिल से हवन करना चाहिये। इसी अवसर पर ब्रीहि, यव और चावल को एकत्र कर के इस सूक्त से अभिमन्त्रित कर के शिशु के दाँत से उन्हें दर्शित कराया जाना चाहिये। फिर उस धान्य को पका कर शिशु को अन्नप्राशन कराया जाना चाहिये।

३. तन्वः तनू का द्विवचन है, जिसका अर्थ ह्विटने ने किया है—what is terrible to yourself.

२१. अन्नसमृद्धि (६/१४२)

इस सूक्त का विषय अन्नसमृद्धि है। विश्वामित्र इसके ऋषि हैं, वायु इसके देवता हैं। अनुष्टुप् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिकसूत्र के अनुसार खेत में बीजवपन के अनुष्ठान में इस सूक्त विनियोग है। अनुष्ठान में घी से मिश्रित जौ खेत में बिखराई जाती है, फिर तीन मुट्ठी धान उस पर बिखेरा जाता है, ताबीज, जिसके भीतर जौ हो, यजमान को बाँधा जाता है।

१. मृणीहि के स्थान पर सायण ने वृणीहि पाठ माना है तथा वर्णव्यत्यय से पृणीहि (पूरय अर्थात् भर दे) यह अर्थ किया है।

३. सायण ने उपसत् का अर्थ खेत में काम करने वाले मजदूर से किया है, उपगन्तारः का अर्थ उन्होंने 'कर्मकराः' किया है। त्रिवेदी के अनुसार उपसद का अर्थ निकटवर्ती कार्यकर्ता है।

२२. शाला (९/३)

यहसूक्त घर या मकान के बारे में है। इस का विषय शाला कही गई है। भग्वङ्गिरा जमदग्नि इसके ऋषि हैं, शाला इसकी देवता है। अनुष्टुप् पथ्यापङ्क्ति (६), परोष्णिक् (७), त्र्यवसाना पञ्चपदाऽतिशक्वरी (१५), प्रस्तारपङ्क्ति (१७), आस्तारपङ्क्ति (२१), त्रिपदा प्राजापत्या बृहती (३१), साम्नी त्रिष्टुप् (२६), प्रतिष्ठा नाम गायत्री (२७-३०) व एकावसाना त्रिपदा (२५-३१) छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिकसूत्र ने इसका विनियोग यज्ञ संस्कार में बताया है, जिसमें आवासगृह का दान किया जाता है। ज़िमर का अनुमान है कि यह सूक्त मकान को टोने से मुक्त करने के लिये है, इसमें जिन पार्शो या बन्धनों की चर्चा है, वे प्रतिपक्षी द्वारा बाँधे गये टोने के बन्धन हैं। ग्रिल का अनुमान है कि मकान बन जाने के बाद उसमें रहने के पहले उसे देवों के अर्पित करने वाले अनुष्ठान के लिये यह सूक्त विनियुक्त है। कौशिकसूत्र के अनुसार यह सूक्त शाला के निर्माण के पश्चात् उसे पुरोहित को दक्षिणा में देने के अनुष्ठान से सम्बद्ध है। दान की विधि का विस्तार से वर्णन कौशिकसूत्र ने किया है। सायण की व्याख्या कौशिकसूत्र के अनुरूप है, और यही व्याख्या ग्राह्य लगती है।

ब्लूमफील्ड (अनु० डॉ० सूर्यकान्त, १९६४ : १६३) लिखते हैं—"एक घर को धीरे धीरे ऐसे अलग कर दिया जाता है, मानों वह एक जीवित प्राणी हो, फिर इसे ब्राह्मण को दे दिया जाता है, जो इसमें रह कर अपने भविष्य के मंगलमय होने की सभी प्रार्थनाओं के साथ इसे ग्रहण कर लेता है।"

मकान के लिये सम्पूर्ण सूक्त में शाला शब्द का प्रयोग किया गया है, अत: इसके लिये स्त्रीवाचक क्रियापद या उपमाएँ प्रयुक्त हैं। शाला के लिये रात, हथिनी और वधू के उपमान अत्यन्त मनोहारी कल्पनाओं के साथ इसमें आये हैं। यहाँ शाला का अनुवाद घर किया गया है, अत: कुछ स्थलों पर अनुवाद में विसंगति आ गई है। मकान के जुड़े अनेक वास्तुविषयक तकनीकी शब्दों का इस सूक्त में प्रयोग है, इनमें से कुछ के वास्तविक आशय अनुसन्धेय हैं। इस पर सायण भाष्य भी प्राप्त नहीं है। सायण द्वारा कथित रूप में लिखित टिप्पणी में दाता के द्वारा शाला के उद्घाटित कर के प्रतिगृहीता या दान लेने वाले को देने में इसका विनियोग माना गया है।

वास्तु से सम्बद्ध तथा घर या मकान के बारे में अनेक महत्त्वपूर्ण सूक्त अथर्ववेद में है। ऊपर अनूदित क्र० ४, शालानिर्माण (३/२२) भी इससे सम्बद्ध है।

१. उपमित, प्रमित तथा परिमित ये तीनों ब्लूमफील्ड के अनुसार क्रमश: fastenings of the buttresses, the supports और connecting beams हैं, तो ह्विटने के अनुसार props, supports तथा connectors हैं। परिमित के अनुवाद पर ह्विटने ने स्वयं प्रश्नचिह्न लगाया है। ब्लूमफील्ड ने टिप्पणी में उपमित और प्रमित को आड़े और तिरछे खम्भे होने की सम्भावना भी इंगित की है, तथा सुझाया है कि परिमित सीधे खड़े खम्भे को जोड़ने वाली cross beam हो सकती है। गोविन्दचन्द्र पाण्डेय (२००१ : ३२०) ने उपमित और परिमित को लकड़ी के खम्भे कहा है। देवीचन्द का अनुवाद अस्पष्ट है, वे कदाचित् पहले दो पदों को ties और fastenings बताते हैं, परिमिताम् का अर्थ चारों ओर से दरवाजों से युक्त कर रहे हैं। सातवलेकर परिमिताम् का आशय उत्तम बन्धनों के लिये मानते हैं, तथा विचृतामसि का अनुवाद हम बाँधते हैं—यह करते हैं। त्रिवेदी ने उपमिताम् का अर्थ उपमायुक्त या सराहनीय किया है। प्रमिताम् का प्रतिमानयुक्त और परिमिताम् का परमाणयुक्त। 'विचृतामसि' को ब्लूमफील्ड और ह्विटने ढीला करने के अर्थ में ले रहे हैं, जो उचित लगता है, आर्यसमाजीय व्याख्याकार त्रिवेदी और देवीचन्द इसके विपरीत इसका अर्थ बाँध कर मज़बूत करना बताते हैं। विश्ववारा भी शाला का विशेषण है, जिसका अर्थ ब्लूमफील्ड ने खजानों से भरपूर (that abounds in treasures) किया है, ह्विटने ने पसन्द की सब चीजों से भरी पूरी (that possesses all choice things)। शाला के लिये 'विश्ववारा' सम्बोधन है, सातवलेकर ने इसका अर्थ किया है—'दुखों का निवारण करने वाला घर।'

२. शस्ता का अर्थ ग्रिफिथ वध करने वाला (slaughterer) करते हैं। पाश: का अर्थ ब्लूमफील्ड तथा ह्विटने ने fetter (बेड़ी) किया है, ग्रन्थि: का दोनों ने अर्थ knot (गाँठ) किया है। देवीचन्द ने इन दोनों शब्दों के अर्थ क्रमश: knot तथा band किया है। वाचा विस्रंसयामि का शाब्दिक अर्थ होगा—'मैं अपनी वाणी से खोलता हूँ' ब्लूमफील्ड ने इसका अर्थ लिया है—with my charm I undo, ह्विटने ने that with a spell I make fall apart। बल वृत्रासुर का ही दूसरा नाम है, जिसे बृहस्पति रूप धारी इन्द्र ने मारा था (ऋ० १०/६७)।

३. 'आययाम' का आशय ह्विटने के अनुसार है उसने विस्तार किया (he stretched)। देवी ने इसका अर्थ draws close किया है। शश्ता को ह्विटने ने वधकर्ता (slaughterer) माना है, देवी ने शल्यचिकित्सक (surgeon)।

४. ब्लूमफील्ड तथा ह्विटने ने वंश को beam माना है, देवीचन्द ने मात्र bamboo, नहन ह्विटने में ties है, देवीचन्द में bolts, प्रणाह का अर्थ ह्विटने ने binding किया है, देवी ने festening।

५. 'मानस्य पत्न्या:' यह शाला का ही विशेषण है, अत: 'मान की रक्षा करने वाली शाला की' यह अर्थ होना चाहिये। मान का अर्थ प्रमाण या नापना भी लिया जा सकता है और आत्मसम्मान भी। सातवलेर ने 'प्रमाण लेने के द्वारा पालित हुए घर के' यह अनुवाद किया है। सन्दंश ब्लूमफील्ड के अनुसार dove-tailed joint है, ह्विटने के अनुसार clamp है, सातवलेकर ने इसे कैंची माना है, पलद को ब्लूमफील्ड ने reed माना है, सातवलेकर इसका अनुवाद चटाई करते हैं, ह्विटने ने इसे यथावत् रहने दिया है। देवी ने सन्दंश का अर्थ ties मान लिया है, पलद उनके अनुसार bands of straw है। ह्विटने ने 'परिष्वञ्जल्य' को embracer कहा है, सातवलेकर ने इसका अनुवाद विलास-स्थान किया है, ब्लूमफील्ड के अनुसार यह frame-work है। देवी का अनुवाद यहाँ इतना भ्रामक है कि पता नहीं चलता वे किस शब्द का क्या अनुवाद कर रहे हैं। त्रिवेदी के अनुसार 'परिष्वञ्जल्य' जोड़ के बन्धन है।

६. शिक्य जो मध्यकालीन भारतीय भाषाओं में छींका बना, ब्लूमफील्ड के अनुसार आराम के लिये बाँधा गया रस्सा (rope) है, ह्विटने के अनुसार hanging vessel या ornamental hanging है। देवी इसका अनुवाद करते हैं—loops which the artisans have bound. चतुर्थ पाद में तनु शब्द को ह्विटने ने आत्मा माना है, ब्लूमफील्ड ने हम लोग।

८. अक्षु ह्विटने के अनुसार जाल (net) है, देवी के अनुसार घर (house)। ह्विटने ने ओपश को ओपश ही रहने दिया है, सातवलेकर ने 'विषूवति ओपशम्'—यह अन्वय मान कर 'आकाश की रेखा पर आभूषण हुआ' यह अर्थ किया है। 'ओपश' शब्द जूड़े के अर्थ में सूर्यासूक्त में आया है। ब्लूमफील्ड अक्षुमोपशम् का

अनुवाद covering of wicker work करते हैं। 'विषूवत्' का अर्थ ब्लूमफील्ड ने किरीट (crown) किया है, ह्विटने के अनुसार यह विभाजन रेखा (division line) है, अवनद्धम् अभिहितम्—बँधा हुआ और तना हुआ (सातवलेकर)। ग्रिफिथ अभिहितम् का अर्थ किरीट diadem करते हैं।

९. 'यह जो अब आ रहा है/साथ तुम्हारे रहने को' का मूल अमुत्रैन-मागच्छतात् है, अमुत्र का अर्थ ब्लूमफील्ड ने परलोक (the other world) किया है, ह्विटने इसे वहाँ (yonder) कहते हैं।

१०. 'परुप्रपरु:' का अर्थ ग्रिफिथ ने जोड़ (joints) किया है।

११. द्वितीय चरण में 'सञ्जभार वनस्पतीन्' है, ब्लूमफील्ड के अनुसार वनस्पति इमारती लकड़ी है, ह्विटने के अनुसार जंगल के पेड़।

१२. नमो दात्रे का सीधा अर्थ 'उस दानशील के प्रति नमन' लिया जाना चाहिये। पर सातवलेकर ने 'उस काटने वाले को' यह अर्थ किया है। चतुर्थ चरण में पुरुष का अर्थ ब्लूमफील्ड के अनुसार परिजन या सेवक है, ह्विटने इसे आत्मा मानते हैं।

१४. विजायवति ब्लूमफील्ड के अनुसार thou that hast produced, ह्विटने के अनुसार rich in births.

१५. व्यचस् ब्लूमफील्ड तथा ह्विटने के अनुसार expance है, रजस् को ह्विटने ने space माना है, उदर को paunch। ब्लूमफील्ड के अनुसार रजसो विमानम् का अर्थ है—stretched out from sky. देवीचन्द ने रजसो विमानम् का अनुवाद कदाचित् असावधानी के कारण छोड़ ही दिया है। अन्तरिक्ष ह्विटने के अनुसार atmosphere है, देवी के अनुसार middle part, विमान् का अर्थ ह्विटने ने व्यापनशील (that which pervades) किया है।

१७. 'पलदान् वसाना' में पलद का अर्थ ग्रिफिथ ने फूस (straw) किया है।

उस मन्त्र में दो अच्छी उपमाएँ हैं। रात्रीव शाला जगतो निवेशनी—यह अत्यन्त रमणीय उपमा वहाँ दी गई है। रात की कल्पना वैदिक ऋषियों ने देवी के रूप में की है, जो एक अपने अंक में मनुष्यों को सुलाती है। शाला या मकान चार स्तम्भों पर अवस्थित है, अत: उसे हथिनी से उपमा दी गई है।

१८. 'इट' का अर्थ ब्लूमफील्ड के अनुसार covered with mats है, ह्विटने के अनुसार rush work है, देवी कदाचित् इसे bolt of door मानते हैं। सातवलेर ने इट को चटाई ही माना है। 'वरुणेन सगुब्जिताम्' का अर्थ सातवलेकर वरुण के द्वारा सींची हुई करते हैं, ब्लूमफील्ड के अनुसार समुब्जिताम् का आशय है बाँधी गई (enfolded by)

२०. ब्लूमफील्ड कुलाय का अर्थ chest करते हैं, ह्विटने तथा देवी घोंसला ही मानते हैं। कोश ब्लूमफील्ड के अनुसार टोकरी (basket) हैं, ह्विटने के अनुसार पात्र (vessel)।

२१. लुडविग पक्ष का अर्थ room करते हैं। पक्ष ब्लूमफील्ड के अनुसार facets है, ह्विटने के अनुसार पार्श्व (sides)।

२३. सर्वाधारवर्णन (१०/७) तथा २४. ज्येष्ठ ब्रह्म (१०/८)

दोनों सूक्तों का विषय सर्वाधार या परम तत्त्व है। पहले सूक्त के अथर्वा ऋषि हैं, स्कम्भ या आत्मा इसका देवता है। अनेक छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। सायण के अनुसार यह स्कम्भसूक्त है। स्कम्भ सनातन देवता है, तथा वह ब्रह्मा का भी आदिदेव है। इसीलिये उसे ज्येष्ठ ब्रह्म कहागया है। अगला सूक्त (१०/८) भी स्कम्भदेवताविषयक है, तथा इस सूक्त का पूरक है। दोनों सूक्तों में दार्शनिक तत्त्व का पहलियों व प्रतीकों के माध्यम से जिस प्रकार विवेचन किया गया है, वह सर्वथा अपूर्व है।

१. ग्रिफिथ ने तप का अर्थ seat of fervour किया है। ऋत को वे ceremonial order मानते हैं। ह्विटने ने ऋत का अर्थ right माना है, देवीचन्द ने इसे वैदिक ज्ञान समझा है। व्रत का अर्थ ह्विटने vow करते हैं, देवी holy duty.

२. मातरिश्वा ग्रिफिथ के अनुसार मातरिश्वन् की साँस और ह्विटने के अनुसार वायु (air) है, देवी ने भी यही अर्थ किया है।

३. अन्तरिक्ष ह्विटने के अनुसार atmosphere है, देवी के अनुसार middle air। 'महद् यक्षं भुवनस्य मध्ये'—यह वस्तुतः परम तत्त्व या परमदेव का वर्णन है।

४२वाँ मन्त्र पहेली या उलटबासी जैसा लगता है। पर दो युवतियों का करघे पर वस्त्र बुनने का प्रतीक वैदिक वाङ्मय में प्रचलित और सुविदित रहा होगा। तैत्तिरीय ब्राह्मण में इसका वर्णन है।—

द्वे स्वसारौ नयतस्तन्त्रमेतत्
सनातनं विततं षण्मयूखम्।
अवान्यांस्तून् किरतो धतोऽ-
न्यान् नाप वृञ्जाते।

(दो बहनें करधे पर वस्त्र बुन रही हैं। यह तन्त्र (करघा) सनातन, विस्तीर्ण और छह किरणों वाला है। वे कुछ धागों को नीचे ले जा कर जोड़ती जाती हैं, कुछ को नीचे नहीं (ऊपर) ले जाती हैं।)

न अपवृञ्जाते का अर्थ सातवलेकर के अनुसार है—न विश्राम करती है।

४३. 'पुमानेतत् वि जभाराधिनाके'—इसका अर्थ ग्रिफिथ के अनुसार a male had stretched into the rope of heaven. इसी मन्त्र में मयूखाः का अर्थ सातवलेकर ने धूणँटियाँ किया है।

दूसरे सूक्त १०/८ के ऋषि कुत्स हैं, आत्मा इसका देव है।

२५. भात (११/३)

इस सूक्त का विषय ओदन या भात है। अथर्वा इसके ऋषि हैं, ओदन या बार्हस्पत्यौदन इसके देवता कहे गये हैं। अनेक छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। ह्विटने ने इस

सूक्त में ओदन (भात) का अर्थ rice dish किया है, जो उनके अनुसार सूर्य की प्रतीक भी है। इसके अंगों के लिये विभिन्न वस्तुओं के रूपक यहाँ प्रस्तुत किये गये हैं, जो ह्विटने के अनुसार ब्राह्मणों का 'most grotesque manner' है। देवीचन्द ने ओदन का अर्थ ईश्वर मान कर ही पूरे सूक्त का अनुवाद किया है।

सायण के अनुसार यह शत्रुनाश का टोटका है। तदनवसार बृहस्पतिसव यज्ञ में हवि, अभिमर्शन, सम्पात, दातृ व वाचन तथा दान कर्म किये जायें। इस अभिचार या टोटके में सवनविधान से ओदन पका कर पृषातक से सेचन कर इस सूक्त से अभिमर्शन का अभिमन्त्रित ओदन शत्रु को दे देने चाहिये।

४. 'अपाविनक्' का अर्थ सायण के अनुसार 'ब्रीहीभ्यस्तण्डुलानां विवेचयिता' अर्थात् ब्रीहि धान से तंडुल या चावलों को अलग करने सकने वाला है। ह्विटने इसका अर्थ श्वास-नि:श्वास करते हैं, देवी अशुद्ध पदार्थ।

५. मशका: का अर्थ सायण ने 'क्षुद्र जन्तव:' किया है। कब्रव: की व्याख्या में वे कहते हैं—कं शिर एव भ्रुवौ अस्य। ग्रिफिथ ने इसका अनुवाद छोड़ दिया है।

९. स्फ्यौ = धान्यादिधारस्य शकटस्यावलयौ, अनूक्ये = अंसयोर्मध्यदेहस्य च सन्धी (सायण)।

१०. जत्रु का अर्थ ह्विटने ने गले की रस्सियाँ (neck ropes) किया है, देवी ने जोतने के लिये बाँधी गई रस्सियाँ (strings to yoke the oxen) किया है। वस्त्रा: की व्याख्या सायण यह करते हैं—ओदनसम्बन्धिशकटलाङ्गलयोजनार्थाश्चर्मविकार रज्जव: (भात ढोने वाली गाड़ी के जुए में लगाने के लिये चमड़े की रस्सियाँ)।

११. कुम्भी देवी के अनुसार cauldron है, ह्विटने के अनुसार पात्र (vessel)।

१२. ऊबध्यम् = अर्धजीर्ण तृणात्मकं उदरगतं शकृत् (सायण)।

१६. इस मन्त्र में आये बृहत् तथा रथन्तर दोनों शब्दों का अनुवाद ह्विटने ने नहीं किया है। देवी के अनुसार रथन्तर विश्व (universe) है, बृहत् को उन्होंने विशेषण मान कर vast अर्थ कर दिया है, जब कि मन्त्र में यह विशेषण नहीं संज्ञा के रूप में प्रयुक्त है। ह्विटने ने भाष्यकार के अनुसरण करतेहुए आयवन को पकते भात को हिलाने के लिये काम में आने वाला काठ का डंडा (stirring stick) बताया है, देवीचन्द के अनुसार आयवन कड़छुल (stirring spoon) है। सायण ने आयवन की व्याख्या करते हुए कहा है—"उदके प्रक्षिप्तानां तण्डुलानां मिश्रणसाधनं काष्ठम्।"

१८. ह्विटने के अनुसार उख boiler है, चरु पात्र (vessel)। सायण के अनुसार चरु का मूल अर्थ ओदन या भात ही है, उसे पकाने के लिये काम में आने वाली स्थाली (बटलोई) भी चरु कही जाती है। उखम् का अर्थ सायण ने फिर स्थाली ही किया है। घर्म का अर्थ ह्विटने ने गर्मी माना है, देवीचन्द ने सूर्य।

२१. 'यस्य देवा अकल्पतोच्छिष्टे षडशीतय:'—ह्विटने के अनुसार, six times eighty gods, देवी के अनुसार, six vast pervading directions.

१४. इसमें 'अनुपसेचनम्' विशेषण प्रयुक्त है। सायण के अनुसार, 'उपसिच्यतेऽनेनेति उपसेचनम्, क्षीराज्यदध्यादि तद्रहित इति च न ब्रूयात्', ग्रिफिथ के अनुसार, 'nor devoid of moistenig sauce.

२६. साँस (११/४)

इस सूक्त का विषय प्राण है। भार्गव वैदर्भि इसके ऋषि हैं,प्राण इसके देवता है। अनुष्टुप् आदि अनेक छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। यह आयुष्य सूक्त है। कौशिक के अनुसार इसका विनियोग आचार्य के द्वारा शिष्य के उपनयन के अवसर पर भी होता है। सायण के अनुसार उपनयन के अवसर पर आचार्य इसका जप करता है, तथा ग्रह यज्ञ मे शनैश्चर के लिये हवि, आज्यहोम और समिदादान में भी यह विनियुक्त होता है। प्राण को जीव, आत्मा या ब्रह्म का वाचक मान कर उपनिषदों में अनेकत्र निरूपित किया गया है। कहीं कहीं इसे पर्जन्य वाचक भी बताया गया है। सायण के मत में प्राण यहाँ समष्ट्यभिमानी प्रथमसृष्ट हिरण्यगर्भ है। इस सूक्त के पाँचवे और छठे मन्त्रों में प्राण को वृष्टि करने वाला कहा है।

ह्विटने ने प्राण का अर्थ साँस मानते हुए सारे सूक्त का अनुवाद किया है, देवीचन्द ने ईश्वर मान कर। त्रिवेदी के अनुसारप्राण यहाँ जीवनदाता परमेश्वर है। प्राण श्वास है, तो अपान नि:श्वास। अत: चौदहवें मन्त्र में ह्विटने ने अपानति क्रियापद का अनुवाद breaths out किया है।

१. क्रन्द का अर्थ ह्विटने ने roaring ही किया है, देवीचन्द ने इसे roaring with embodiment of joy कर दिया है।

५. मह: शब्द उत्सव के अर्थ में प्रसिद्ध है, पर मह: ब्लूमफील्ड के अनुसार शक्ति है, ह्विटने के अनुसार greatnness है, देवी के अनुसार great production of corn.

११. प्राण के निकल जाने से मृत्यु हो जाती है, अत: प्राण की मृत्यु भी कहा गया है। तक्मन् शब्द ज्वर के अर्थ में अथर्ववेद में अनेकत्र प्रयुक्त है। सायण के अनुसार यह 'कृच्छ्रजीवनकर ज्वरादिरोग' है। ब्लूमफील्ड ने ज्वर ही अर्थ किया है।

१२. ह्विटने ने विराट् को यथावत् रहने दिया है, ब्लूमफील्ड ने भी विराट् को यथावत् रख कर कोष्ठक में इसके लिये power और lustre ये शब्द दिये हैं। देवीचन्द इसका अनुवाद highly luminous करते हैं। देष्ट्री ब्लूमफील्ड के अनुसार मार्गदर्शक देवता (divinity that guides), तो ह्विटने के अनुसार निर्देशिका (directress) है, देवी के अनुसार यह कर्त्तव्य का पथ दिखाती है।

१३. अनड्वान् का अर्थ ब्लूमफील्ड ने steer किया है।

१४. जिन्वसि = प्रीणयसि (सायण)।

१५. मातरिश्वा सायण के अनुसार अन्तिरिक्षाधिपति वायु है। ह्विटने अन्यत्र मातरिश्वा को वायु बताते हैं, यहाँ उन्होंने मातरिश्वा को यथावत् रहने दिया है, देवीचन्द ने भी अन्यत्र तो मातरिश्वा का अनुवाद air ही किया है, यहाँ इसे pervading the atmosphere कहा है।

१८. 'बलि' सायण के अनुसार अमृतमय भाग है।

२०. शचीभिः = with his mights (ब्लूमफील्ड)

२१. इस मन्त्र में वर्णित हंस को सायण ने सूर्य माना है (हन्ति गच्छतीति जगत्प्राणभूतः सूर्यः)। उन्होंने इसे प्राण का प्रतीक भी कहा है। ह्विटने 'न उत्खिदति' का अनुवाद करते हैं—does not extract, ब्लूमफील्ड निवृत् नहीं होता (does not withdraw), देवीचन्द 'कभी नहीं त्यागता' (never renounces)। देवी के अनुसार हंस सर्वव्यापी परमात्मा है, 'एकम् पादम्' से आशय उसके ऋत के नियम (His one law of truth) से है। ह्विटने ने इन दोनों पदों का सामान्य अर्थ हंस पक्षी तथा एक पाँव किया है। सायण उत्खिद् का अर्थ क्षेपण करना मानते हैं।

२२. सहस्राक्षरम् में ब्लूमफील्ड अक्षर का अर्थ ध्वनि (sound) करते हैं।

२३. क्षिप्रधन्वने = क्षिप्रं गच्छते व्याप्नुवते (सायण)।

२६. द्वितीय चरण 'न मदन्यो भविष्यसि' का सामान्यतः अर्थ होगा—तुम मुझ से अलग नहीं होओगे। उत्तरार्ध कुछ अस्पष्ट है। सायण ने इसकी व्याख्या में कहा है—मया सह तादात्म्यापन्न इव वर्तसे। ब्लूमफील्ड के अनुसार पानी का गर्भ (अपां गर्भः) अग्नि है।

२७. ब्रह्मचर्य (११/५)

इस सूक्त का विषय ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, ब्रह्मचारी इसका देवता है। अनुष्टुप् आदि अनेक छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। कौशिक के अनुसार यह सूक्त उपनयन संस्कार में विनियुक्त होता है। पूरा सूक्त ब्रह्मचारी का वर्णन है। ब्रह्मचारी से आशय क्या है, इस पर विद्वानों के अलग अलग मत हैं। ड्यूसन ने ब्रह्म के अवतारभूत ब्रह्मशिष्य को ब्रह्मचारी कहा है, ब्लूमफील्ड ब्रह्मचारी का अर्थ Brahmanical disciple करते हैं, पर सूक्त का शीर्षक वे यह देते हैं—सूर्य का या ब्रह्मरूप आदि शक्ति का महिमामंडन (Glorification of Sun or the primeval principle as a Brahman principle. ह्विटने ने इसका अर्थ सर्वत्र वैदिक छात्र (Vedic student) किया है। देवीचन्द ने अपने अनुवाद में ब्रह्मचारी शब्द यथावत् रहने दिया है।

सायण के अनुसार यह सूक्त ब्रह्मचारी के माहात्म्य का प्रतिपादन करता है।

१-२, ११. ब्लूमफील्ड ने तपस् का अर्थ सर्जनात्मक ऊर्जा (creative fervour) किया है। तपस् ह्विटने के अनुसार fervour है।

२. इस मन्त्र में तैंतीस देवों का उल्लेख है। सायण ने ऐतरेय ब्राह्मण के सन्दर्भ से ये तैंतीस देव इस प्रकार परिगणित किये हैं—आठ वसु, एकदाश रुद्र, बारह आदित्य, प्रजापति तथा वषट्कार।

४. 'धर्म को धारण कर'—इसके लिये मूल है—'धर्म वसानः' सायण ने इसके भाष्य में कहा है—दीप्तं रूपमाच्छादयन्।

५. 'पूर्वं जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी' में ब्लूमफील्ड ने ब्रह्म का अर्थ 'आध्यात्मिक उत्कर्ष' (spiritual exaltation) माना है, ब्राह्मण का अर्थ brahmanic life. (देवी ने द्वितीय पाद में धर्म वसानः पाठ मान कर acquiring dignity यह अनुवाद किया है, ह्विटने ने घर्म वसानः यह पाठ माना है, और अपने को ग्रीष्म पहनाये (clothing himself with heat) यह अनुवाद किया है।

६. महुराचरिक्रत्—ब्लूमफील्ड के अनुसार इसका अर्थ है—लोकों का संचय कर के वह उन्हें आकार देता है।

७. परमेष्ठी ह्विटने के अनुसार the most exalted one है, देवी के अनुसार सर्वोच्च (the highest)।

८. उभे नभसी सायण के अनुसार द्यावापृथिवी हैं, नभस् को उन्होंने अन्तरिक्ष का पर्याय माना है। ह्विटने नभसी के अनुसार 'दोनों आवरण' (both envelops) हैं। देवीचन्द ने इसे spacious regions कहा है।

९. अर्पि का अर्थ ह्विटने ने set किया है।

१०. निहितौ ह्विटने के अनुसार are deposited है।

११. नभसी का अर्थ आठवें मन्त्र के समान ह्विटने ने यहाँ भी 'दोनों आवरण' किया है, श्रयन्ते का अर्थ वे are set करते हैं। 'दोनों अग्नियाँ मिल रही हैं'—का मूल 'द्वे अग्नी समेतः' है, जिसके भाष्य में सायण कहते हैं—'एकोऽग्निः अनुद्यत् सूर्यात्मको वर्तते, अन्यःपार्थिवोऽग्निः पृथिव्या उपरि वर्तते।'

१२. शितिङ्गो यह पाठ दिल्ली संस्करण में है। सायण ने श्यतिङ्गः पाठ लिया है और इसका अर्थ इस प्रकार किया है—'श्येतवर्ण तलपूर्ण मेघं प्राप्तः'। ह्विटने के अनुसार शितिङ्ग white-goer है, देवी के अनुसार pallid। शितिङ्गः का अर्थ त्रिवेदी ने प्रकाश और अन्धकार में चलने वाला किया है। अनुजभार का अनुवाद ह्विटने ने प्रश्नवाचक चिह्न के साथ has introduced किया है। सानो ह्विटने की दृष्टि में on the surface है। बृहच्छेपः ब्लूमफील्ड के अनुसार विशाल लिंग (great penis), ह्विटने के अनुसार उत्पादक अंग (virile member).

१४, १५. ह्विटने ने दोनों मन्त्रों को अस्पष्ट माना है। देवीचन्द के अनुसार आचार्य शिष्य को ऐसे ही दण्ड देता है, जैसे मृत्यु मनुष्य को। सत्वानः ब्लूमफील्ड के अनुसार योद्धागण हैं।

१६. अध्यात्मनः का अर्थ ब्लूमफील्ड के अनुसार अपनी स्वयं की आत्मा से (from his own spirit) है।

१८. ह्विटने ने इस मन्त्र के चतुर्थ पाद में क्रिया जिगीषति मानी है, जब कि शंकर पांडुरंग पंडित जिगीर्षति पाठ लेते हैं। देवीचन्द ने भी यही पाठ रखा है। स्वामी दयानन्द अपनी भाष्य-भूमिका में जिगीषति ही पाठ मानते हैं, तथा वैदिक यन्त्रालय, अजमेर के सं० में भी यही पाठ है। ह्विटने के पाठ के अनुसार अर्थ होगा—विजय की इच्छा करता है, तो दूसरे पाठ के अनुसार अर्थ होगा—निगलने की इच्छा करता है।

१९. सायण के अनुसार इस मन्त्र में उल्लिखित वनस्पति वनों का पालन करने वाला देव है।

२३. परिषूत का अर्थ ह्विटने ने sent forth किया है। देवी में इसका अर्थ अस्पष्ट है। अनछुआ प्रकाशित के लिये मूल है अनभ्यारूढम्, सायण ने इसका अर्थ किया है—अन्यैरनाक्रान्तम्।

२८. उच्छिष्ट ब्रह्म (११/७)

सायण के अनुसार आहुति से शेष बचे ओदन या भात की इस सूक्त में सर्वजगत्कारण ब्रह्म के रूप में स्तुति की गई है। सातवलेकर ने इसे 'उच्छिष्ट-ब्रह्मसूक्त' कहा है। ब्रह्म या परमतत्त्व के दो रूप है ज्येष्ठ ब्रह्म और उच्छिष्ट ब्रह्म। परवर्ती काल में इनके स्थान पर निराकार और साकार या निर्गुण और सगुण की अवधारणाएँ विकसित हुई। सातवलेकर उच्छिष्ट या अर्थ ऊर्ध्व भाग में अवशिष्ट करते हैं, तथा पुरुष सूक्त में 'त्रिपादूर्ध्वमुदेत् पुरुषः पादोऽस्येहाऽभवत् पुनः'—इस उक्ति के अुसार ब्रह्म के तीन चरण या तीन चौथाई भाग ऊपर रहता है, और एक भाग विश्व को रच कर उसमें समाया हुआ है।

२. ऊर्जा के लिये यहाँ 'वाजः' शब्द है, सायण ने इसके भाष्य में कहा है—तदीयं बलम्।

३. इस मन्त्र में पहेली की भाँति व्र और द्र इन वर्णों का प्रयोग किया गया है। सायण के अनुसार व्र वारक वरुण है और द्र द्रावक अमृतमय सोम।

२६. पिङ्गल का अर्थ ह्विटने ने ruddy किया है।

२९. धरती (१२/९)

इस सूक्त का विषय भूमिदेवता है। अथर्वा इसके ऋषि हैं, भूमि इसकी देवता है। विविध छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। यह दृढीकर्माणि के अन्तर्गत पठित है। इस सूक्त का विनियोग गृहप्रतिष्ठा, भूकम्पनिवारण आदि के लिये किये जाने वाले अनुष्ठानों में बताया गया है। वास्तोष्पति सूक्तो में भी यह परिगणित है। कौशिकसूत्र के अनुसार

आग्रहायणी अनुष्ठान तथा अन्य अनेक अनुष्ठानों में इसका उपयोग होता है। अलग अनुष्ठानों में इसके अलग-अलग मन्त्र विनियुक्त होते रहे हैं।

विश्वबन्धु के सम्पादन में होशियारपुर से प्रकाशित संस्करण में इस सूक्त पर सायण भाष्य नहीं है, इसके साथ संस्कृत में जो पूर्वटिप्पणी दी गई है, वह सम्पादक की लिखी प्रतीत होती है।

३. पूर्वपेये का अर्थ ह्विटने ने first drinking तथा देवी ने drinkable objects किया है, पर सुझाव दिया है कि इसका अर्थ आद्य पद व स्थान (foremost rank and station) भी हो सकता है। पैप्पलाद संहिता में इस मन्त्र के पाठ में बहुत भेद है, तथा द्वितीय पाद 'यस्यां देवा अमृतमन्वविन्दन्' है।

६. जगत् ह्विटने के अनुसार moving things, वैश्वानर—universal fire, देवीचन्द के अनुसार, ferocious like fire।

८. 'जिसको अपनी माया से उबार कर ले आये ऊपर मनीषी जन'—इसके लिये मूल में कहा है—यां मायाभिरन्वचरन् मनीषिणः' ग्रिफिथ ने इसका अनुवाद किया है—"whom with their wondrous powers the sages followed".

९. दुहाम् का अर्थ ह्विटने के अनुसार yield है, वर्चस् का अर्थ splendour. ब्लूमफील्ड वर्चस् का अर्थ glory करते हैं। 'अतो उक्षतु वर्चसा' (सींचे हमें तेज से) में वर्चस् का अनुवाद ग्रिफिथ ने flood of splendour किया है।

११. पर्वत को ह्विटने पहाड़ व गिरि को पहाड़ी (hill) मानते हैं।

१२. ऊर्जस्—ह्विटने के अनुसार refreshments

१५. पाँच कुटुम्बों को यहाँ 'पञ्च कृष्टयः' कहा गया है। देवीचन्द के अनुसार ये पाँच जातियाँ हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वणिक्, शिल्पी और श्रमिक।

१८. सधस्थ ह्विटने के अनुसार station और सन्दृश् का अर्थ aspect है।

२२. स्वधा के लिये ह्विटने ने स्वधा ही रहने दिया है।

२७. ह्विटने के अनुसार 'वानस्पत्याः' वन्य वृक्ष (forest trees) है।

२८. व्यथिष्महि का अर्थ may not stagger, देवीचन्द ने we will not reel यह अर्थ किया है।

२९. विमृग्वरि का अर्थ ह्विटने ने स्वच्छ करने वाली (cleansing) किया है, ब्लूमफील्ड ने पवित्र (pure) और देवी ने पावन करने वाली (purifire)।

३०. सेदुः का अर्थ ह्विटने ने mucus किया है,

३३. मेदिन् का अर्थ ह्विटने ने ally किया है, देवीचन्द ने दयालु (kind)। 'चक्षुर्मा मेष्ट' ह्विटने के अनुसार let my sight not fail. देवीचन्द ने भी यही अर्थ लिया है।

३४. प्रतिशीवरि का अर्थ जयदेव शर्मा ने किया है—सबको अपने ऊपर सुलाने वाली।

३५. मा अर्पिपम्—पीडित न करूँ (जयदेव शर्मा)। ग्रिफिथ के अनुसार, 'let me not pierce thee through the vitals of they heart'.

३७. देवपीयून् का अर्थ ब्लूमफील्ड ने blasphemous किया है। ह्विटने ने 'god-insulting'

३८. सदस् वेदी का एक भाग है। ह्विटने के अनुसार हविर्धानी का अर्थ है—जिसमें हवन की सामग्री रखी जाये। ब्लूमफील्ड ने सदस् का अर्थ यज्ञशाला (sacrificial hut) किया है तथा हविर्धानी का अर्थ लिया है—ऐसे दो पात्र जिनमें सोम रखा जाता है।

३९. वेधस: से ह्विटने के अनुसार आशय पवित्र मनुष्य से है।

४१. ब्येलबा: का अर्थ ह्विटने ने किया है—उच्च कोलाहल के साथ (with loud noise)

४२. पञ्चकृष्टि ह्विटने के अनुसार five races हैं। देवीचन्द्र ने भी यही अर्थ लिया है। ऊपर भी इस पर टिप्पणियाँ द्रष्टव्य हैं।

४३. विकुर्वते = ह्विटने के अनुसार fall out, देवी के अनुसार work hard. रण्या का अर्थ ह्विटने ने सुखद (pleasant) किया है।

४५. धर्म का अर्थ ह्विटने यहाँ रीतियाँ (customs) करते हैं।

४६. वृश्चिक को ह्विटने ने काटने वाला (stinging) कहा है, भ्रमला का अनुवाद ह्विटने प्रश्नचिह्न के साथ torpid (निर्जीव, आलसी) रखा है। अन्य व्याख्या के अनुसार भ्रमल कृमिविशेष है। मृड का अर्थ ह्विटने के अनुसार है—अनुकम्पावती बनो (be thou gracious) देवी ने इसका अर्थ किया है—हमें आशीष दो (bless thou us).

४७. मल्व ह्विटने के अनुसार foll (पर्ण) है, देवी के अनुसार प्रकाश। निधन का अर्थ ह्विटने ने शव या मृत्यु किया है।

४९. ह्विटने ने उल को सियार माना है, ऋक्षीका को उन्होंने यथावत् रहने दिया है। देवीचन्द्र ने उल का अर्थ लकड़बग्घा और ऋक्षीका का अर्थ भालू (bear) किया है।

५०. ह्विटने ने अराय और किमिन्दी इन दोनों शब्दों का अनुवाद नहीं किया है। देवीचन्द ने अराय को कंजूस (miser) किमिन्दी को व्यर्थ पुरुष (worthless persons) कहा है।

५४. उत्र का अर्थ ह्विटने और ब्लूमफील्ड दोनों श्रेष्ठतर (superior) करते हैं।

५६. ह्विटने संग्राम का अर्थ आतिथेय (hosts) करते हैं।

५८. तद् वनन्ति = मुझे प्रदान करते हैं (they furnish for me—ब्लूमफील्ड); मेरे लिये जीत कर ले आते हैं (they win for me—ह्विटने)।

६१. आवपनी को ह्विटने ने scatterer माना है, देवीचन्द ने क्षेत्र (field)

६२. उपस्था: ह्विटने के अनुसार पार्श्व में खड़े लोग (bystanders) हैं। देवी ने इसका अर्थ गोद किया है।

३०. सूर्या का विवाह (१४/१)

इस सूक्त का विषय विवाहप्रकरण है। सूर्या सावित्री इसकी ऋषि हैं, आत्मा, सोम, विवाह, सोम और अर्क, चन्द्रमा आदि इसके देवता हैं। अनुष्टुप् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। इस सूक्त के अधिकांश मन्त्र ऋग्वेद १०/८५ में हैं। चौदहवें काण्ड में दो सूक्त हैं, दोनों विवाह सूक्त हैं, और सूर्या इन में नववधू के रूप में वर्णित है। पहले सूक्त में ६४ और दूसरे में ७५ मन्त्र हैं। दोनों सूक्त वैवाहिक लोकाचारों, मंगलभावना और पारिवारिक जीवन की अनन्य छवि प्रस्तुत करते हैं।

शंकर पांडुरंग पण्डित के अनुसार सूर्या सूर्यस्वरूपा सवितृपुत्री है, उसके विवाह की कथा इस सूक्त में वर्णित है। इस सूक्त के पहले सोलह मन्त्र और २३वाँ तथा २४वाँ मन्त्र—इस प्रकार १८ मन्त्र विवाह के अवसर पर कन्या के घर में आज्य होम में विनियुक्त होते हैं। ३१वाँ मन्त्र कुमारी वधू को खिचड़ी खिलाने और पुरुष के हाथ से कसोरा देकर वर के पास भेजने में प्रयुक्त होता है। ३७वाँ मन्त्र पानी लेने के लिये जल में ढेला फेंकते समय पठित होता है। ३८वाँ तथा ५२वाँ मन्त्र वधू के स्नान के अवसर पर विनियुक्त होते हैं। ५२वें मन्त्र का विनियोग योक्त्र नामक रस्सी को वधू की कटि में बाँधे जाते समय है। यह रस्सी कन्या के शयनागार में पहुँचने पर खोली जाती है और इस अवसर पर ५३ से ५८वें तक के मन्त्रों का विनियोग होता है।

४. आकृति का अर्थ ह्विटने मानक (norm) करते हैं, देवी आकार (shape)

५. चित्तिरा उपबर्हणम् (मन के संकल्प का तकिया लगाये)—में ग्रिफिथ ने उपबर्हण का अनुवाद coverlet किया है।

७. न्योञ्चनी ह्विटने के अनुसार स्वागत गीत (welcoming song) है। अनुदेयी को देवीचन्द ने दहेज माना है, ह्विटने ने विदागीत, तो ग्रिफिथ ने इसे विवाह के समय की सखी bridal friend कहा है।

८. प्रतिधि का अर्थ ग्रिफिथ ने cross bars of pole, तो ह्विटने ने cross pieces किया है, देवीचन्द ने स्तोम को ऋषि और प्रतिधि को रखवाला मान लिया है। कुरीर और औपश को ह्विटने ने बिना अनुवाद के यथावत् रहने दिया है। ग्रिफिथ कुरीर को छन्द समझते हैं और 'kurir metre decked her head'—यह अनुवाद करते हैं। देवीचन्द के अनुसार कुरीर कर्त्तव्य पालन और ओपश माथे का आभूषण है।

१०. ग्रिपिथ यहाँ मनः का अनुवाद spirit करते हैं। छदिः (छाजन) को उन्होंने canopy कहा है।

१३. वहतु का अर्थ ह्विटने ने वधूसम्बन्धी (bridal) किया है। मघासु हन्यन्ते गायः (माघ मे छीजती हैं सूरज की किरणें) का अनुवाद आधुनिक अधिकांश विद्वानों ने हन् धातु का वध करना अर्थ मान कर किया है। ग्रिफिथ के अनुसार 'in Magha days are the oxen slain'.

१६. ह्विटने के अनुसार अद्धातये से आशय ज्ञानी (enlightened) से है, देवीचन्द्र के अनुसार परम सत्य को जानने वाला। इस मन्त्र में सूर्या के रथ के दो चक्रों का निरूपण है। ग्रिफिथ के अनुसार ये दोनों चक्र आकाश और धरती है।

१९. प्रत्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशात्—(मैं तुझे मुक्त करता हूँ वरुण के पाश से)—का अनुवाद ग्रिफिथ ने यों किया है—'the girdle with which the bride is girdled'

२५. ह्विटने ने शामुल्य को बिना अनुवाद के यथावत् रहने दिया है। ग्रिफिथ इसे नववधू के ऊनी वस्त्र मानते हैं। देवी ने शामुल्य को हृदय की अपावनता माना है। कृत्यैषा पद्वती भूत्वा (चलती फिरती जादू का मूरत बन कर) का अनुवाद ग्रिपिथ यह करते हैं—'this witchery hath got her feet'

२६. नीललोहितं भवति—(हो जाता है नील लोहित)—का अनुवाद ग्रिपिथ ने किया है—'it furneth dusky red'. कृत्यासक्तिर्व्यज्यते (जैसे जादू डालता है प्रभाव) का अनुवाद उन्होंने किया है—the witch who clingeth close is driven off

२७. 'अश्लीला तनूर्भवति रुषती पापयामुया' (कैसी अश्लील हो जाती है/काया उसकी/चमकती हुई पाप में)—का अनुवाद ग्रिफिथ ने किया है—'unlovely is the body when it glistens with that wicked friend'. जयदेव शर्मा के अनुसार इस मन्त्र में यह सन्देश निहित है कि पति कभी अपनी पत्नी के उतरे हुए कपड़े न पहना करे!

२८. तानि ब्रह्मोऽथ शुम्भति—(ज्ञानी ही उसको दे सकता है छुटकारा) का अनुवाद ग्रिफिथ के अनुसार यह है—'yet these the Brahman purifies'. जयदेव शर्मा ने इसे नववधू के रजस्वला होने का वर्णन माना है। इस मन्त्र में वधू के उन वस्त्रों को अगले दिन पुरोहित आदि को देने के लोकाचार का संकेत है, जो वर से प्रथम समागम में रक्ताक्त हो गये हों। वेबर ने रक्ताक्त वस्त्र को बलिपशु के तुल्य माना है। ब्रह्मन् या पुरोहित बलिपशु का रक्त भी साफ करता है, अतः वधू का यह वस्त्र भी वही ले जाता है।

२९. तुष्टम्—जयदेव शर्मा के अनुसार तृषा या उष्णताका रोग जिसमें हो। कटुकम् का अर्थ इन्होंने फोड़े पुंसियों वाला, और अपाष्टवत् का अर्थ घृणितवस्तु के समान किया है।

३२. इस मन्त्र में उस्रियाः शब्द आया है, ब्लूमफील्ड ने इसका अनुवाद रक्ताभ (ruddy) किया है। ग्रिफिथ इस अनुवाद में कहते हैं—'the dawn that come for glory'

३६. देवीचन्द के सं० में महानघ्न्या पाठ है। ह्विटने महानग्नी शब्द मानते हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ अत्यधिक नग्न रहने वाली स्त्री है, और यह वेश्या के लिये

एक संज्ञा है। देवी ने इसका अर्थ अपावन स्त्री किया है। शंकर पांडुरंग पण्डित और वेबर महानघ्नी ही पाठ मानते है। जयदेव शर्मा के अनुसार महानघ्न्या बड़ी नंगी या महावेश्या है। ह्विटने ने प्रथम पाद में यन्मा नग्ना जघनम् पाठान्तर भी सूचित किया है।

४०. मेथि शब्द का अनुवाद ह्विटने ने स्तम्भ किया है। ग्रिफिथ के अनुसार यह वह खम्भा है जो गोशाला में मध्य में बनाया जाता है और जिससे बैल बाँधे जाते हैं। युगस्य तद्मे (गाड़ी के जुए का छिद्र) में तद्मे को ह्विटने perforation समझते हैं।

४१. ऋग्वेद (७.८०.७) में इन्द्र के द्वारा अपाला का रोग दूर करने का उल्लेख आया है। तदनुसार सायण ने अपाला के इतिहास का विवरण दिया है। स्वामी दयानन्द वेद में इतिहास है—इस मत का खण्डन करते हैं, अत: वे इसे सायण, ग्रिफिथ आदि की कपोल कल्पना बताते हैं। तदनुसार देवी ने अपाला का अर्थ highly qualified wife किया है।

४६. शांखायन गृह्यसूत्र तथा आश्वलायन गृह्यसूत्र के अनुसार यह मन्त्र विवाह के अनुष्ठान में अन्त में वधू के रुदन के समय पढ़ा जाता है। चतुर्थ पाद में जनये के स्थान पर जनयस् पाठ भी मिलता है।

५०. यह मन्त्र विवाह में पाणिग्रहण के समय पढ़ा जाता है। ऋ० में गृह्णामि के स्थान पर गृभ्णामि पाठ मिलता है।

५८. देवीचन्द के अनुसार वरुण के पाश माता पिता के बन्धन हैं, सविता पिता है।

६०. उष्पल देवीचन्द के अनुसार चार आश्रम, ह्विटने के अनुसार उष्पल frame pieces हैं।

पिपेश पिश् धातु का लिट् लकार है, यहाँ सजाने के अर्थ में इस का प्रयोग हुआ है। वध का अर्थ ह्विटने ने बद्दी (strapcs) किया है।

३१. अभय (१९/१५)

अभयप्राप्ति या निर्भय होने के भाव को व्यक्त करने वाले अनेक सूक्त अथर्ववेद में हैं। विशेष रूप से १९वें काण्ड में ही १४वें सूक्त से २०वें सूक्त तक के सभी सूक्तों में अभय या सुरक्षा की कामना ही ऋषियों ने प्रकट की है। इस सूक्त के अन्तिम दो मन्त्र ही यहाँ अनुदित है।

३२. दर्भ (१९/३२)

इस सूक्त का विषय दर्भ (डाभ, तर्पण में प्रयुक्त घास) है। भृगु इसके ऋषि हैं, दर्भ इसका देवता है। अनुष्टुप्, पुरस्ताद्, बृहती, त्रिष्टुप् तथा जगती छन्द इसमें प्रयुक्त हैं।

त्रिवेदी ने दर्भ को दो अर्थ माने हैं—शत्रुविनाशक परमेश्वर या औषधविशेष।

१. उत्तर का अनुवाद ह्विटने ने प्रश्नवाचक चिह्न लगा कर उठाने वाला (up-lifting) किया है, देवीचन्द के अनुसार उत्तिर का अर्थ अचूक (infallible) है।

२. 'न वपन्ति' का अर्थ ह्विटने ने scatter not forth किया है, देवी ने shear off किया है। वप धातु काटने और बिखराने दोनों अर्थों में प्रयुक्त होती है। देवी ने पहला और ह्विटने ने दूसरा अर्थ लिया है। केशों को काटने या बिखराने, वक्ष पर प्रहार करने की क्रियाओं का कर्ता कौन है—यह मन्त्र में कहीं बताया नहीं गया है। देवी ने पता नहीं किस आधार पर कीटाणुओं को केशवपन की क्रिया का कर्ता मान कर अनुवाद में germs शब्द जोड़ दिया है। दूसरी क्रिया के कर्तृत्व के लिये उन्होंने ह्विटने के ही समान वे सर्वनाम ही रखा है।

३. तूल का अर्थ ह्विटने ने चुटिया या शिखा (tuft) किया है।

९. अस्तभ्नात्—ह्विटने के अनुसार उठा दिया (propped) देवी के अनुसार स्थिर बनाया (makes firm).

चौथे पाद में 'दर्भो वरुणो दिवा कः'—यह देवीचन्द के सं० का पाठ है। ह्विटने ने वरुणो के स्थान पर धरुणो पाठान्तर को विचारणीय माना है।

३३. कालसूक्त (१९/५३)

इस सूक्त का विषय काल है। भृगु इसके ऋषि हैं, काल इसका देवता है। अनुष्टुप् त्रिष्टुप् (१-४), निचृत् पुरस्ताद् बृहती (५) छन्द इसमें प्रयुक्त हैं। इसके आगे का सूक्त १९/५४ भी कालविषयक है। ह्विटने का अनुमान है कि ये दोनों एक ही सूक्त के भाग हैं। देवीचन्द ने पूरा अनुवाद काल का अर्थ सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान् परमात्मा मान कर ही किया है। इस सूक्त का अनुष्ठान या यज्ञ आदि से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं प्रतीत होता. यद्यपि सायण ने इसका सौवर्ण भूमिदान तथा आज्यहोम में विनियोग बताया है।

काल के अखण्ड और सखण्ड दो रूपों, काल की निरपेक्षता और सापेक्षता, दिक् और काल से सापेक्ष सम्बन्ध—इन विषयों पर सूक्ष्म इंगित करने वाला इतना प्राचीन अन्य काव्य विश्व में दूसरा कदाचित् नहीं मिलेगा।

१. काल सात लगामों वाले अश्व को हाँक रहा है—इसमें अश्व कौन है—यह नहीं कहा गया है। ह्विटने का अनुमान है कि अन्तिम चरण में चक्र या पहियों का उल्लेख होने से काल अश्व पर सवार नहीं है, अश्व के द्वारा खींचे जाने वाले रथ पर सवार है। देवीचन्द ने तो अपनी ओर से अनुवाद में chariot शब्द जोड़ दिया है। सायण के अनुसार सात रश्मियाँ मुख, ग्रीवा तथा पाँवों में बँधी हुई हैं, तथा ये सात रश्मियाँ छह ऋतुएँ और एक मल मास हैं। ऋ० १/१६४/१ में युञ्जन्ति पर भी सायण ने यही व्याख्या दी है। सहस्राक्ष में सायण अक्ष का अर्थ किरण करते हैं। ग्रिफिथ ने सप्ताह के सात दिनों को सात लगामें माना है। विपश्चितः का अनुवाद यहाँ ज्ञानी किया गया है, ग्रिफिथ के अनुसार विपश्चित् पवित्र ज्ञान से प्रेरित ऋषि हैं (sages inspired with holy knowledge).

२. काल के रथ में सात पहिये बताये गये हैं, सायण के अनुसार "सप्त ऋतून् अनु अनुक्रमेण धारयति" ऋ० १/१६४ तथा ३/१२ में भी सात चक्र उल्लिखित हैं। ग्रिफिथ दो दो महीनों के युगल और एक मलमास को सात पहिये मानते हैं। सात नाभियाँ उनके अनुसार सात लोक हैं। देवी के अनुसार ये सात पहिये हैं—छह ऋतुओं के दो दो महीनों के जोड़े और एक मलमास। उनके अनुसार सात नाभियाँ सात ऋतुएँ भी हो सकती हैं, और सात वैदिक छन्द भी। क्षण, पल, होरा, मुहूर्त, प्रहर, दिन, रात्रि—इनका अथवा—अहोरात्र, सप्ताह, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, और संवत्सर इनका भी आशय हो सकता है।

वह सम्मुख है इन सारे भुवनों के—इसका मूल है—"स इमा विश्वा भूतानि प्रत्यङ्"। ब्लूमफील्ड ने इसका अनुवाद किया है—"He carried away all these beings". जब कि ह्विटने अनुवाद करते हैं—"It is in front of all these beings". व्योम का अर्थ ह्विटने अन्तरिक्ष (firmament) करते हैं, ब्लूमफील्ड विस्तृत आकाश (vast sky)।

४. काल पिता हो कर भी इन सबका पुत्र भी है—यह कथन देवीचन्द के लिये असमंजसकर है, कयों कि वे काल का अर्थ परमात्मा करते हैं। इस दुविधा का वे यही समाधान करते हैं कि पुत्र जिस तरह बुढ़ापे में माता पिता की सेवा साल सँभाल कर के उनका अभिभावक बन जाता है, इसी तरह सर्वशक्तिमान् प्रभु की सृष्टि का संरक्षक उनके बेटे हैं, अतः वे पिता हो कर भी अपने पुत्रों के पुत्र बन जाते हैं।

५. पृथिवीः बहुवचन में है, पैप्पलाद संहिता में 'इमां पृथिवीम्' एक वचन का पाठ मिलता है। ब्लूमफील्ड आदि के मत से यहाँ तीन पृथ्वियों से आशय है।

३४. देह (१९/६०)

इस सूक्त का विषय शरीर के अंग हैं। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, वाक् और अंग इसके देवता हैं। पथ्या बृहती और ककुम्मती पुर उष्णिक् छन्द इसमें प्रयुक्त हैं।

(१९/६७)

इस सूक्त का विषय दीर्घायुष्य है। ब्रह्मा इसके ऋषि हैं, सूर्य इसके देवता हैं। प्राजापत्य छन्द इसमें प्रयुक्त हैं।

प्रथम दो पाद ऋ० ७/६६ के अन्तिम दो पाद हैं।

●

पुस्तक सूची

मूल ग्रन्थ

अथर्ववेद का सुबोध भाष्य, भाग १-४, पं० श्रीपाद दामोदर सावलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, जि० बलसाड, तृतीय सं० १९८९

अथर्ववेद—सायणभाष्य सहित, सं० शंकर पांडुरंग पण्डित, मुंबई, १८९५-९८

अथर्ववेद—सायणभाष्य सहित, सं० विश्वबन्धु, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, १९६१

अथर्ववेद—वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

अथर्ववेद—हिन्दी भाष्य सहित, भाष्यकार—क्षेमकरणदास त्रिवेदी, दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली, १९७४

अथर्ववेद—अंग्रेजी अनुवादसहित, अनुवादक—देवीचन्द, दिल्ली।

सन्दर्भ ग्रन्थ

ब्लूमफील्ड (अनु०—डॉ० सूर्यकान्त) अथर्ववेद एवं गोपथ ब्राह्मण, चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, १९६४

The Hymns of Atharvaveda—Translated with a Popular Commentary Vol. I, II-Ralph T.H. Griffith, II Ed., 1916, E.J. Lazarus and Co., Benaras.

अथर्ववेद—अंग्रेजी अनुवाद, अनु०—ह्विटने, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

अथर्ववेद—चुने हुए २१४ सूक्तों का अंग्रेजी अनुवाद, अनु०—ब्लूमफील्ड, सेक्रेड बुक्स ऑफ ईस्ट सं०—४२

●

राधावल्लभ त्रिपाठी की विश्वविद्यालय प्रकाशन द्वारा प्रकाशित अन्य कृतियाँ

भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय काव्यशास्त्र के प्रस्थानप्रवर्तक आचार्यों पर केन्द्रित है। इसमें ऐतरेय महीदास से ले कर पण्डितराज जगन्नाथ तक ग्यारह आचार्यों के काव्य और कला से सम्बन्धित विचारों का गहरा विमर्श प्रस्तुत करते हुए इनके बीच पारस्परिक अन्त:संवाद, आदान-प्रदान तथा इनके माध्यम से हमारे कलाचिन्तन में उठने वाले शास्त्रार्थ या बहस के अनेक बिन्दुओं पर विद्वान् लेखक ने विचार किया है। श्री त्रिपाठी ने यहाँ भारतीय काव्यचिन्तन की तीन हजार वर्षों की सम्पन्न परम्परा को विशद रूप में उजागर किया है। प्रत्येक आचार्य की सांस्कृतिक व दार्शनिक पृष्ठभूमि पर विचार करते हुए लेखक ने उसके समकालीन या पूर्ववर्ती आचार्यों के मन्तव्यों को भी तुलनात्मक आलोक में प्रस्तुत किया है। इन ग्यारह आचार्य परम्परा को उनकी समग्रता में समझने के लिये आधार भी बनाते हैं। स्वभावत: इनकी सांस्कृतिक व दार्शनिक पृष्ठभूमि पर भी यहाँ विचार किया गया है, और इनके समकालीन या पूर्ववर्ती आचार्यों का भी यथाप्रसंग निरूपण किया गया है।

आशा है काव्यशास्त्र में रुचि रखने वाले सुधी पाठकों के लिये यह ग्रन्थ अत्यन्त उपादेय है।

संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास
(द्वितीय संस्करण)

राधावल्लभ त्रिपाठी का संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास सचमुच में एक अभिनव इतिहास है। यह संस्कृत साहित्य की पाँच सहस्र से अधिक वर्षों की परम्परा का विशद परिचय तो देता ही है, इस साहित्य की सुदीर्घ विकास यात्रा का उद्भवकाल, स्थापना काल, समृद्धिकाल तथा विस्तार काल इन चार कालों के क्रमिक सोपानों में विभाजन के द्वारा विद्वान् लेखक ने हमारी साहित्यिक धरोहर का पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्मूल्यांकन भी नये आलोक में यहाँ किया है। संस्कृत के अनेक अज्ञात किन्तु महत्त्वपूर्ण रचनाकारों का परिचय पहली बार इस कृति में समाविष्ट हुआ है, तथा प्रसिद्ध महाकवियों की जो समीक्षा की गई है, वह छात्र तथा साहित्य के जिज्ञासु पाठकों के लिये तो उपादेय है ही, विद्वज्जनों के लिये भी ग्राह्य है।

पुस्तक के द्वितीय संस्करण में संस्कृत साहित्य से सम्बन्धित अनेक नवीन प्रकरण जोड़े गये हैं, जिससे यह और भी संग्रहणीय बन गई है।

राधावल्लभ त्रिपाठी

जन्म : 15 फरवरी 1949 ई०, मध्य प्रदेश के राजगढ़ जिले में।

शिक्षा : एम०ए०, पी-एच०डी०, डी०लिट्०।

प्रकाशन : अब तक संस्कृत हिन्दी और अंग्रेजी में 105 पुस्तकें। पुस्तकों में आदिकवि वाल्मीकि, संस्कृत कविता की लोकधर्मी परम्परा (दो संस्करण), काव्यशास्त्र और काव्य (संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्यपरम्परा शीर्षक से नया संस्करण), लैक्चर्स ऑन नाट्यशास्त्र तथा नाट्यशास्त्रविश्वकोश (चार खण्ड) आदि चर्चित हुईं। शोध पत्रिकाओं में 185 शोधपरक, चिंतनपरक लेख तथा पचास से अधिक अन्य समीक्षात्मक लेख प्रकाशित। विगत चालीस वर्षों से संस्कृत तथा हिन्दी में रचनात्मक लेखन। हिन्दी में तीन कहानी-संग्रह व एक उपन्यास तथा दो पूर्णाकार नाटक प्रकाशित। संस्कृत और हिन्दी में लिखी अनेक कहानियाँ और कविताएँ अन्य अनेक भाषाओं में अनूदित।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के उन्नीस पुरस्कार व सम्मान। व्याख्यान, अध्यापन, सम्मेलनों में अध्यक्षता आदि के लिये अनेक बार विदेश प्रवास।

सम्प्रति : 1970 ई० से विश्वविद्यालय में अध्यापन। सम्प्रति, आचार्य, संस्कृत विभाग, डॉ० हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर।

संस्कृत भाषा, साहित्य एवं समीक्षा

अर्थ विज्ञान और व्याकरण दर्शन	डॉ० कपिलदेव द्विवेदी
वैदिक साहित्य एवं संस्कृति	डॉ० कपिलदेव द्विवेदी
भाषा-विज्ञान एवं भाषा-शास्त्र	डॉ० कपिलदेव द्विवेदी
रसों की संख्या	डॉ० वी० राघवन, अनुवाद : प्रो० अभिराज राजेन्द्र मिश्र
संस्कृत का समीक्षात्मक काव्यशास्त्र	प्रो० अभिराज राजेन्द्र मिश्र
भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य-परम्परा	डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी
संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास	डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी
अभिनव का रस-विवेचन	नगीनदास पारेख
अभिनव रस सिद्धान्त	डॉ० दशरथ द्विवेदी
वक्रोक्तिजीवितम्	डॉ० दशरथ द्विवेदी
रसाभिव्यक्ति	डॉ० दशरथ द्विवेदी
ध्वन्यालोक: (दीपशिखा टीका सहित पूर्णतया संशोधित परिवर्धित)	आचार्यचण्डिकाप्रसाद शुक्ल
मृच्छकटिक : शास्त्रीय, सामाजिक एवं राजनीतिक अध्ययन	डॉ० शालग्राम द्विवेदी
उपरूपकों का उद्‌भव और विकास	डॉ० इन्द्रा चक्रवाल
संस्कृत नाटकों में शौरसेनी (कालिदास और राजशेखर के संस्कृत नाटक)	डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव
संस्कृत के प्रतीकात्मक नाटक	डॉ० आशारानी त्रिपाठी
संस्कृत का भाषाशास्त्रीय अध्ययन	डॉ० भोलाशंकर व्यास
चतुर्भाणी (चार एकनट नाटक)	डॉ० मोतीचन्द्र व
गुप्तकालीन शृंगारहाट	डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल
मुद्राराक्षसम्	सम्पा० : डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी
मेघदूतम् (कालिदास)	सम्पा० : डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी
दशरूपकम्	सम्पा० : डॉ० रमाशंकर त्रिपाठी
उत्तररामचरितम् (श्री भवभूति प्रणीतम्)	डॉ०रामअवध पाण्डेय व डॉ०रविनाथ मिश्र
अभिज्ञानशाकुन्तलम्	सम्पा० : डॉ० शिवशंकर गुप्त
संस्कृत के प्रतीकात्मक नाटक	डॉ० आशारानी त्रिपाठी

विश्वविद्यालय प्रकाशन
पो०बॉ० 1149, विशालाक्षी भवन,
चौक, वाराणसी - 221001
Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082
e-mail : sales@vvpbooks.com

Rs. 150.00
ISBN 81-7124-536-6
9 788171 245369
www.vvpbooks.com